वन्दी जीवन

(द्वितीय भाग)

श्रीशचीन्द्रनाथ सान्याल

हिन्दी भवन,

अनारकली, लाहोर ।

द्वितीय संस्करण]

[मूल्य १।=)

वीर जननी

स्वर्गीया क्षीरोदवासिनी देवी

"मेरे बहुत जन्मों के सुकर्मों का फल था कि बंगाली के घर मुझे ऐसी मा मिली थी।" (पृ० ७०)

समर्पण

जिन को जीवन में नाना रूप से दुःख कष्ट ही देता रहा, उत्कट इच्छा रहने पर भी सांसारिक रीति से जिन को कुछ भी सुखी नहीं कर सका, दिन और रात, सुख और दुःख में, सम्पद् और विपद् में, जिन की याद कर के एक दम आनन्द और दुःख से विह्वल सा हो उठता हूं, जो मेरे दुःखों में साझी हो कर केवल दुःख ही दुःख पाती रहीं, अपनी उन्हीं परम स्नेहमयी जननी के श्रीचरणों में यह अपना क्षुद्र सा ग्रन्थ श्रद्धा और भक्ति-सहित उत्सर्ग करता हूं।

श्री शचीन्द्रनाथ

अनुवादक की आलोचना

"वन्दी जीवन" का पहला भाग हिन्दी मे मैं ने पह
सन् १९२३ मे पढा था। उसमें कुछ ऐसी आन्तरिकता और
को जगाने की अमोघ शक्ति थी कि पढते पढ़ते वार
हाथ से किताव वन्द हो जाती, और घडी घडी भर छत
देखते हुए में कुछ सोचने में लीन हो जाता । उस की वि
शैली ने मुझे इतना प्रभावित किया कि मेरी इच्छा आ
लिखने की हुई । किन्तु, 'उत्थाय हृदि लीयन्ते द
मनोरथा !' साढे तीन वरस तक वह इच्छा दिल की
दवी रही। मुझे स्वप्न में भी ध्यान न था कि उस के दूस
का हिन्दी अनुवाद मुझे ही करना होगा । आज तक मैंने
ग्रन्थ का अनुवाद नहीं किया। अनुवादक की ऊची गद्दी पर
की महत्वाकाक्षा न कभी मेरे दिल मे थी और न
प्रस्तुत पुस्तक का अनुवाद यदि मैंने किया है तो केवल
अपने वन्धुओ और मित्रों के पारस्परिक कार्य को निभा
लिए । किन्तु यह अनुवाद करने के कारण क्या मैं उ
आलोचना के अधिकार से वञ्चित हो सकता हू ? प्रस्तुत
अनुवाद के कारण ही तो मुझे "वन्दी जीवन" का अधिक
करने का अवसर मिला है, और वह दवी हुई इच्छा फि
पनप उठी है।

सच कहें तो यह "बन्दी जीवन" भारतवर्ष के आधुनिक इतिहास के एक महत्वपूर्ण अध्याय का प्रामाणिक विवेचन है। हमे इसके लेखक के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ, तो भी उनके ग्रन्थ को पढ कर इतना हम निश्चय से कह सकते हैं कि उन की दृष्टि बडी तीक्ष्ण और मर्मवेधी है, और उन की पैनी आँखों के पीछे एक प्रबल छुपा कैमरा है जो देखी चीज का फोटो फौरन ले लेता है। एक सैनिक का जीवन बिताते हुए उन्हों ने अपने मस्तिष्क में साहित्यिक सुरुचि का जैसा पोषण किया है उसे देख कर दग रह जाना पडता है।

किन्तु इन गुणों से कहीं अधिक महत्व की वस्तु है उन की अन्तर्दृष्टि, उनकी आन्तरिकता। जगह जगह अपनी कहानी को छोड कर लेखक अपने अन्दर और अपने दल के अन्दर एक झाँकी लगाते हैं और अपने भावों और विचारों को ऊचनीच को एक प्रबल प्रकाश में परखते हैं। वे कहते हैं कि बगाली नवयुवक केवल कुछ खास शिकायतों को रफा करने के लिए, किन्हीं नैमित्तिक कारणों से या केवल आकस्मिक बनावों के कारण विप्लव दल में शामिल न हुए थे, अवश्य ही उन में कुछ त्रासवादी (Terrorist) भी थे, किन्तु अधिकाश युवक एक ऊंचे आदर्श की साध में, अपने सम्पूर्ण जीवन को सार्थक बनाने की खोज मे, अपने मनुष्यत्व का अपनी व्यक्ति का–अपने 'स्व' का–सर्वाङ्गीण स्वतन्त्र विकाश करने की खातिर इस व्रत मे दीक्षा लेते थे। इस ग्रन्थ में की हुई अनेक अन्तर्मुख आलोच-

नायें लेखक के इस कथन को किस खूबी से पुष्ट करती हैं !

और अपने चरित्र के इस गुण में बंगाली नवयुवकों ने अपनी शुद्ध भारतीयता का परिचय दिया है। भारतीय स्वभाव से दार्शनिक है। वह स्वभाव से अपने जीवन की दार्शनिक मीमांसा करता है, किसी मार्ग मे पडने से पहले उसका मन उस की पूर्णता को तात्विक दृष्टि से समझना चाहता है। इस दार्शनिक वृत्ति का व्यावहारिकता से कोई विरोध नहीं है। किन्तु हमारा तो विचार है, जितना अधिक हम एक श्न की दार्शनिक विवेचना करेंगे, उतनो ही पूर्णता से उसे सुलझा पायेंगे। "वन्दो जीवन" के लेखक की यही दार्शनिक अन्तर्दृष्टि उनकी घटनाओ की कहानी को गौरवमय बना देती है।

किन्तु यह अनुवादक तो एक इतिहास का विद्यार्थी है, और वह पाठकों का ध्यान सब से अधिक इस ग्रन्थ की ऐतिहासिक विवेचनशैली की ओर खींचना चाहता है कोई दिन था जब राजवशो और "बडे" आदमियों के जीवन की घटनाओ का उल्लेख करना ही इतिहास का काम समझा जाता था। आज यह कहा जाता है कि इतिहास का कार्य जातियो और समाजों के आरोह-अवरोह, उत्थान-पतन की घटनाओं का वर्णन और व्याख्या करना, उन की परम्परा को समझाना है। किन्तु सच्चे ऐतिहासिक के कर्त्तव्य की यहीं पर समाप्ति नहीं होती, प्रत्युत आरम्भ ही होता है। घटनाओं की परम्परा को स्पष्ट करना तो इतिहासानुशीलन का केवल आरम्भ है, इतिहास

का ठीक ठीक मनन तो तब होता है जब हम उन घटनाओं को पैदा करने वाली प्रेरणाओं—उन घटनाओं को प्रेरित करने वाले भावों, विचारों और प्रवृत्तियों तक पहुच पाते है। एक उदाहरण लीजिए। गुरू गोविन्दसिंह न, कहते हैं ५२ कवि अपने पास रक्खे हुए थे, और यह तो निश्चित है कि उन्हा ने राजसी ठाठ धारण किया था। प्रो० यदुनाथ सरकार तथा डा० रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने इस घटना की यों व्याख्या की है कि गुरु गोविन्दसिंह ने एक सन्त की सादगी की अपेक्षा राजकीय मान को अधिक पसन्द किया, दूसरे राजाओं की तरह उन्हों ने दरबारी खुशामदी कवि जमा किये, और इस प्रकार के आचरण से गुरु नानक के विशाल उदार धर्म को एक सकीर्ण सैनिक पन्थ बना दिया। हमारा विचार है यदु बाबू और रवि बाबू ने गुरु गोविन्द-सिंह की प्रेरणा को बिलकुल गलत समझा है *। कवियों को इकट्ठा करने का उद्देश्य पजाब मे एक नई साहित्यिक जागृति उत्पन्न करना था और गुरु गोविन्दसिंह ने नानक के धर्म को सकीर्ण नहीं किया, प्रत्युत उनके भक्तिमार्ग मे कर्म का पुट दे दिया। घटनायें तो एक ही है, पर उनकी प्रेरणा को भिन्न भिन्न प्रकार से समझने मे जमीन आसमान का अन्तर पड जाता है।

और घटनाओं की प्रेरणा को समझने और स्फुट करने में

---

* उनकी आलोचना करने की इच्छा भी कई बरस से "दरिद्रों के मनोरथों" की तरह दिल में दबी पड़ी है।

श्रीयुत सान्याल ने वह सामर्थ्य दिखलाया है जो विरले ऐतिहासिकों को प्राप्त होता है। आप एक बहुत पढने वाले विद्वान् नहीं हैं,यह बात आप की पुस्तक से जगह जगह प्रकट होती है,—पिंगले का पूरा नाम याद न आने पर आप सीधा कहते हैं भूल गया, रौलेट रिपोर्ट उठा कर ढूंढ नहीं लेते। किन्तु वह गहरी अन्तर्दृष्टि जो पढने लिखने से प्राप्त नहीं होती, जो एक सच्चे ऐतिहासिक की जन्मसिद्ध पूंजी, जन्मसिद्ध प्रतिभा का अंश होती है, श्रीयुत सान्याल को प्रकृति ने खुले हाथों दी है। व्यक्तियों के दलों के आन्तरिक भावों को वे खूब पहचानते है। सिक्खों के, बंगालियों के, मुसलमानों के और अन्य भारत-वासियों के दिलों को, मानो चीर कर वे पाठक के आगे रख देते हैं। सिक्ख-चरित्र के गुण दोष को उन्हों ने यदु बाबू से कहीं अधिक अच्छा समझा है। उनकी इस सफलता का यह भी तो कारण है कि वे केवल इतिहास लेखक नहीं हैं, प्रत्युत जिस इतिहास को लिख रहे हैं उसके बनाने वालों में से हैं उस इतिहास के पात्रों के वे जीवन-मरण की खेल में साथी थे। यदि वे उन के भावों पहचानते नहीं तो उन के नेता हो कैसे बनते? सच्चे विप्लवनेता में भी तो ठीक वही गुण चाहिए जो एक सच्चे इतिहास-लेखक में होना चहिए।

विप्लव का प्रयास व्यर्थ क्यों हुआ, इस प्रश्न के विचार में लेखक ने सचमुच उस गहरी अन्तर्दृष्टि और विचारशक्ति का परिचय दिया है। दौर्भाग्य से उन की विचारशक्ति का सिक्का

मानते हुए भी हम उन के परिणामों से सहमत नहीं हो सके। वे कहते हैं उपयुक्त नेताओं और विचारकों का अभाव ही उनकी व्यर्थता का असल कारण हुआ है। हमें इस पर यह कहना है कि किसी समाज की प्रगति पर एक दो व्यक्तियों के होने न होने का कुछ प्रभाव नहीं पडता, जातीय आन्दोलन अनेक व्यक्तियों के छोटे छोटे कार्यों से मिल कर बनते हैं। नेता और विचारक होने योग्य प्रतिभा रखने वाले अनेक व्यक्ति इसी दल में रहे होंगे। जब तक उन के नेतृत्व और उन की कल्पनाओं को चरितार्थ करने के लिए अनुकूल सामग्री तैयार न हो तो वे क्या कर सकते? सैकड़ों युवकों के त्याग, तप और सेवा के छोटे छोटे कार्यों से जिस आदर्श की दिशा सूझ न चुकी हो, उस आदर्श की कल्पना जनता के सामने रख कर कौन विचारक या नेता पागल कहलाने की हिम्मत करेगा? विचारक और नेता अपने समय के प्रवाह के सूचक मात्र होते हैं। वे उस से बहुत आगे नहीं बढ सकते। यदि सन् १९०५ से लगाकर १९१८ तक इन गुमनाम युवकों ने देश के कार्य के लिए जेल जाने का रास्ता न बना दिया होता, तो न तो रवि बाबू का 'गोरा' ही जेल गया होता और न महात्मा गान्धी को ही जेल के अन्दर तपोमन्दिर दीख पडता। यह ठीक है कि विचारक जो ऊंचा आदर्श जनता को दिखा देते हैं वह अनेक जन साधारण को ऊपर उठाने की शक्ति रखता है किन्तु यह भी याद रहे कि जिस ऊंचाई पर खड़े हो कर वे आदर्श की ओर हाथ बढाते हैं

वह ऊंचाई भी अनेक जनसाधारण की लाशों के ढेर ने
होती है। दोनों का आगे बढना या ऊपर उठना परस
सापेक्ष है।

इस लिए इस प्रथम विप्लवयुग में कोई प्रतिभावान्
पैदा नहीं हुए, यह एक आकस्मिक घटना नहीं है, यह
किसी कारण का फल है। नेता क्यों पैदा नहीं हुए ? दल
क्यों पैदा न कर सका ? क्योंकि यह प्रथम प्रयास था।
यह विप्लव का प्रयास इसी लिए' विफल हुआ क्योंकि
पहला ही प्रयास था। बच्चे का खडा हो कर चलने का पह
प्रयत्न जिस कारण "विफल" होता है, ठीक उसी कारण
विप्लव का यह पहला प्रयास भी "विफल" हुआ था।

स्थान थोडा है, नहीं तो इस मनोरञ्जक विषय पर
विचार करते। किन्तु बन्द करने से पहले मूल पुस्तक त
उस के लेखक का कुछ व्यक्तिगत परिचय हिन्दी जगत्
देना आवश्यक है। आज कल आप फिर आजन्म कारावा
की सजा भुगत रहे है। १९२० में आप कालापा
से लौटे। '२२ में 'बन्दी जीवन' का प्रथम भाग छपा। '२४
दूसरा भाग बगाल की प्रसिद्ध मासिक पत्रिका "बगवाणी
मे छपा करता था। इसी बीच शायद अक्तूबर १९२४
बगाल आर्डिनेंस जारी हुआ, और बडी धरपकड हुई। अ
बारों में श्री सान्याल के पकडे जाने की बात भी छपी,
पीछे पढा कि आप के नाम से घोषणापत्र निकला है जि

मे आप ने लिखा है कि मैं अभी तक सुरक्षित हूं। 'बंगवाणी' में आप के लेख जारी रहे, और इसी बीच 'बन्दी जीवन' दूसरा भाग पुस्तकाकार प्रकाशित हुआ। बंगाल कौंसिल में जब होम-मेम्बर सर ह्यू स्टीफन्सन ने आर्डिनैंस ऐक्ट पेश किया तब श्री सान्याल का और उन के घोषणापत्र का विशेष रूप से उल्लेख किया।

इस के बाद फरवरी १९२५ में आप के पकड़े जाने की बात फिर पढ़ी और फिर इस का निषेध नहीं हुआ। बाद में बाकुड़ा सिडीशन केस मे आप को दो वर्ष की कड़ी कैद की सजा हुई। सन् १९२४ के अन्त या '२५ के शुरू में रिवोल्यूशनरी नाम के पर्चे उत्तर भारत में एक ही साथ बटे थे। उन के लिफाफों पर के पतों के हस्ताक्षर, सरकारी हस्ताक्षर विशेषज्ञ की गवाही के आधार पर श्री सान्याल के बतलाये गये, और इस प्रकार इस राजद्रोही पर्चे का प्रचार करने के अपराध पर आप को दो बरस की जेल दी गई। यह अभियोग उपहासास्पद जान पड़ता है। 'बन्दी जीवन' प्रथम भाग का बंगाल में जो दूसरा संस्करण छपा है उस की एक टिप्पणी में लिखा है कि वह अभियोग बिलकुल झूठा था। इधर लखनऊ में काकोरी षड्यन्त्र केस नाम का जो मुकदमा चला था उस में भी श्री सान्याल और उन के एक भाई धर घसीटे गये थे। यहां तो आप को "रिवोल्यूशनरी" पर्चे का लेखक भी कहा गया था। एक रोज आप ने कचहरी में सरकारी वकील तथा सरकारी गवाह पुलिस-

अफसर से पूछा था—क्या आप मुझे इस पर्चे का लेखक मानते हैं, और इस पर्चे को लियाकत से भरा समझते हैं? "हां" के उत्तर मिलने पर आप ने फिर पूछा क्या आप समझते हैं कि जो आदमी इस पर्चे का लेखक होगा वह इतना मूर्ख होगा कि लिफाफे पर पते अपने हाथ से लिखने बैठेगा? उन्हीं खुफिया अफसर से आपने उस दिन फिर कहा था कि तुम अपने को बडा चालाक समझते हो, पर फरार होने की दशा मे मैं तुम्हारे साथ एक ही ट्राम मे कलकत्ते में घूमता रहा हू।

आप मुकद्दमे में अपनी वकालत स्वय करते और कोर्ट मे ऐसा ही रग बनाये रहते थे। स्पेशल मैजिस्ट्रेट मि० ऐनुद्दीन ने आप की योग्यता की खूब तारीफ की थी।

सैशनजज ने आपको उस मुकदमे में आजीवन कालापानी की सजा दी और छोटे भाई को पाच साल की सख्त कैद हुई। हाई कोर्ट में केकोरी षडयत्र केस की अपील हुई पर आपने हाई कोर्ट में अपनी वकालत अपने आप करने की इजाजत मागी जो न मिली। इसीलिए आपने अपील न की और वह सजा बहाल रहा। सम्भवत आजकल आप लखनऊ सेंट्रेल जेल में है।

आपके पीछे आपकी माता श्रीयुक्ता क्षीरोदवासिनी देवी जी का स्वर्गवास होगया।

इस पुस्तक में जिन सब टिप्पणियों के अन्त में 'लेखक' नहीं लिखा उन्हें अनुवादक का समझना चाहिये।

निवेदन

जेल से लौट कर पिछले विप्लव युग का एक संक्षिप्त इतिहास लिखने की प्रबल इच्छा मेरे दिल में पुष्ट होती रही, पर दिल की बात दिल में ही रह जाती यदि मेरे परम मित्र श्रीयुत हेमन्तकुमार सरकार मेरे लेख "नारायण" में छपवाने का प्रबन्ध न कर देते। कहना चाहिए कि उन्हीं की कृपा से मैं बन्दी जीवन का प्रथम भाग लिख कर समाप्त कर सका। बन्दी जीवन के प्रथम भाग में इस बात का कृतज्ञतापूर्वक उल्लेख न कर के मैं ने सचमुच एक अपराध किया है। "नारायण" में पहले पहल मेरे लेख प्रकाशित होने से ही पीछे दूसरी पत्रिकाओं में मेरे लेख छपना सम्भव हुआ है।

बन्दी जीवन के इस दूसरे भाग का लिखना भी न हो सकता यदि हमारी अत्यन्त प्रिय मासिक पत्रिका "बङ्गवाणी" में मुझे क्रमश लेख लिखने का सुयोग न मिलता। "बङ्गवाणी" के सञ्चालकों का मैं इस के लिए अत्यन्त कृतज्ञ हूं बन्दी जीवन का दूसरा भाग "बङ्गवाणी" से ही ले कर छपवाया गया है।

निवेदक

श्री शचीन्द्रनाथ

की आवहवा मे हमारे जीवन ने कैसो कितनी चोटें खाई थीं सो भी विशेप रूप मे दिखाने को चेष्टा करूगा। हमारे परिचित जगत् के पडौस मे जिस एक और विचित्र जगत् की सृष्टि हुई है वह विश्वामित्र की सृष्टि से भी अधिक रहस्यमय है, इस जगत के अन्दर जो एक और ही जगत् है, बचे रहने पर भी उस मृत्यु के परले पार का एक अस्पष्ट और वेदनापूर्ण आभास हमें मिला था। दिल में सोचा था यह बात इस खण्ड मे कह सकूगा, किन्तु अब देखता हू वैसा करने मे पोथी बहुत बढ जायगी, इस लिए एक और खण्ड मे यह सब कहानी कहने की इच्छा है।

और इसी लिए † यहां एक महापुरुष के बाद दूसरे महापुरुष का आविर्भाव सम्भव नहीं हो पाता।

किन्तु इस बार के इस नवीन युवकों के विप्लव आन्दोलन की विशेषता यही थी कि यह आन्दोलन किसी का मुह नहीं देखता रहा। देश के गन्य मान्य लब्धप्रतिष्ठ नेता लोग जब एक रास्ते पर चल रहे थे, तब यह गुमनाम गरीब युवकों का सम्प्रदाय सैकड़ों विपत्ताओं में डगमगाये बिना अनेक बाधाओं और कष्टों से हिम्मत हारे बिना, देश के नेताओं के विरुद्ध ही नहीं प्रत्युत उन के द्वारा निषिद्ध मार्ग में जाते हुए हिचकिचाता न था। महामति तिलक ने जेल से बाहर आकर पुराने आदर्शों में भ्रम देखा और अपना मत बदल लिया, और अन्त में देश छोड़ कर जर्मनी जाने का सङ्कल्प भी प्रकट किया। मनीषी विपिनचन्द्र भी इङ्गलैण्ड से वापिस आकर अपनी सारी शक्ति के प्रयोग से यह प्रचार करने लग गये कि पूर्ण स्वाधीनता का आदर्श भारत के लिए सुविधाजनक न होगा। ऋषि अरविन्द राजनैतिक क्षेत्र से छुट्टी लेकर भगवान् की लीला के उपयुक्त आधार बनने के लिए

---

† मध्यकाल में आकर भारतीय राष्ट्र की जीवनधारा क्षीण हो जाती है, एक सतत प्रवाह के साथ नहीं बहती यह ठीक है। भारतीय राष्ट्र के समूचे जीवन के लिए यह नहीं कहा जा सकता। भारतीय इतिहासमें Stagnation का यह काल शायद आभ समाप्त [illegible] का गहरा प्रश्न है जिस पर यहां पूर्ण विचार

सह सकीं और पागल हो गई, कितनो ही के पिताओं की सरकारी नौकरी चली जाने से उन का परिवार गरीबी की चक्की में पिस कर आश्रय की खोज मे दर दर फिरने लगा, समाज के अन्दर एक मर्मवेधी अन्तर्नाद घहरा उठा, किन्तु विप्लवियों का दिल फिर भी न दहला। क्यों ऐसा हुआ ?

भारत के इतिहास में प्राय देखा गया है कि किसी अच्छे नेता की अधीनता में भारतवासियो ने कितनी ही बार वीरता दिखा कर भारत का मुख उज्ज्वल किया है, कितनी बार असम्भव को सम्भव कर दिखा कर सारे ससार को चकित कर दिया है, किन्तु भारत के दुर्भाग्य से ज्योंही यहा नेता का अभाव हुआ, त्योंही फिर देश ने घोर निद्रा में मग्न होकर ऐसा रूप धारण कर लिया कि फिर सहसा यह विश्वास नहीं होता कि यही भारत वह भारत है,—अतीत काल की कीर्ति मानो उस समय भ्रम सा दिखाई देने लगती है। इसी से हम देखते हैं कि रणजीतसिंह के बाद खालसा समाज में वैसे किसी और शक्तिशाली पुरुष का आविर्भाव न होने से सिक्ख जाति फिर सिर उठा ही नहीं सकी, राणा राजसिंह के बाद राजपूताना मर सा गया और महाराज छत्रसाल के बाद बुन्देलखण्ड ने म्लान मौनता धारण करली। ऐसा होने का कारण है, भारत की पूर्व सुकृति के बल से कभी कभी यहा भाग्यशाली महापुरुषों का आविर्भाव हो जाता है तो भी प्रत्येक जीवन जिस प्रकार पुरुष-परम्परा में अपना प्रवाह बनाये रखता है उस प्रकार भारत की जीवन प्रतिष्ठा नहीं है

और इसी लिए † यहां एक महापुरुष के बाद दूसरे महापुरुष का आविर्भाव सम्भव नहीं हो पाता।

किन्तु इस बार के इन नवीन युवकों के विप्लव आन्दोलन की विशेषता यही थी कि यह आन्दोलन किसी का मुंह नहीं देखता रहा। देश के मान्य मान्य लब्धप्रतिष्ठ नेता लोग जब एक रास्ते पर चल रहे थे, तब यह गुमनाम गरीब युवकों का सम्प्रदाय सैंकड़ों विपदाओं से डगमगाये बिना अनेक बाधाओं और कष्टों से हिम्मत हारे बिना, देश के नेताओं के विरुद्ध ही नहीं प्रत्युत उन के द्वारा निषिद्ध मार्ग में जाते हुए हिचकिचाता न था। महामति तिलक ने जेल से बाहर आकर पुराने आदर्शों में भ्रम देखा और अपना मत बदल लिया, और अन्त में देश छोड़ कर जर्मनी जाने का सङ्कल्प भी प्रकट किया। मनीषी विपिनचन्द्र भी इङ्गलैण्ड से वापिस आकर अपनी सारी शक्ति के प्रयोग से यह प्रचार करने लग गये कि पूर्ण स्वाधीनता का आदर्श भारत के लिए सुविधाजनक न होगा। ऋषि अरविन्द राजनैतिक क्षेत्र से छुट्टी लेकर भगवान की लीला के उपयुक्त आधार बनने के लिए

† मध्यकाल में आकर भारतीय राष्ट्र की जीवनधारा क्षीण हो जाती है, एक सतत प्रवाह के साथ नहीं बहती यह ठीक है। भारतीय राष्ट्र के समूचे जीवन के लिए यह नहीं कहा जा सकता। भारतीय इतिहासमें Stagnation का यह काल शायद आज समाप्त होरहा है। यह एक इतिहास का गहरा प्रश्न है जिस पर यहां पूरा विचार नहीं हो सकता।

तपस्या करने लगे, और पूर्ण योग के आदर्श के गृहस्थ और सन्यासी जीवन में सामञ्जस्य की कल्पना का, तथा यह जगत मिथ्या नहीं, उसी सर्वशक्तिमान् का विलास ही है, लीलामय का लीलाक्षेत्र है, इत्यादि बातों का प्रचार करने लगे। भारत के राजनैतिक क्षेत्र में उस समय उल्लेख योग्य और कोई प्रभावशाली नेता नहीं रहे, इन्हीं कुछ नेताओं ने भारतवर्ष में पूर्ण स्वाधीनता के आदर्श का पहले प्रचार किया था। उसी के फलस्वरूप समाज में जो एक प्राणों की स्फूर्ति हो उठती है, उसी नव जागरण की तरङ्ग आज भी भारत के हृदय को विचित्र प्रेरणा से स्पन्दित कर रही है। इन में से दो जनों ने तो पुराने आदर्श को छोड ही दिया। तीसरे ने मौन साध लिया। भारत के राजनैतिक क्षेत्र में कोई और पथ-प्रदर्शक न रहा। पर भारत के प्राण तो जाग चुके थे, उन में गति आ चुकी थी। जहा जीवन है वहा प्राण ही हैं जो पथप्रदर्शक होते हैं। अपने अन्तरात्मा की ओर ही लक्ष्य रखकर जिन्हों ने जीवन पथ की यात्रा की थी, भारत के उन युवकों ने अपना मत नहीं बदला। वे देश के नेताओं से सलाह ले कर तो इस काम में नहीं उतरे थे, और न कभी इन नेताओ पर उन्हों ने भरोसा ही रक्खा था। नेताओं ने जिन आदर्शों का प्रचार किया था उन आदर्शों को पाने के लिए जो कुछ करना उचित था सो उन्हो ने कभी किया नहीं। भारत के लब्ध प्रतिष्ठ विख्यात नेताओं में से दो एक को छोड कर सब के विषय में कहा जा सकता है कि वे जिस चीज को अपनी विवेचना से

चित समझते हैं उसे कहते नहीं हैं और अनेक बार जो कहते हैं तो करते नहीं हैं। अर्थात् जिस आदर्श का वे प्रचार करते हैं उसे ार्य में परिणत करने को जितना अग्रसर होना चाहिए उतना ग्रसर वे नहीं होते।

किन्तु भारत के उन युवकों के विषय में यह बात नहीं कही जा सकती। देश के अधिकांश नेता, हम स्वयं क्या कुछ कर सकते हैं या नहीं कर सकते यही देख भाल कर फैसला देते हैं कि देश के लिए क्या कार्यक्रम उचित है या अनुचित है। किन्तु हमारे युवक लोग जो कुछ सिद्धान्त तय करते हैं उस में सकने न सकने की बात नहीं रहती, क्या सकना उचित है यही उन के नजदीक सब से बड़ी बात है। युवकों के मन की अवस्था ऐसी ी या है इसी कारण उन में से ही विप्लवियों का आविर्भाव सम्भव हुआ है। और ठीक इसी कारण विप्लवी लोग जीवन पथ में अग्रसर होते समय किसी बड़े नेता का मुंह ताकते न रहते थे और न सफलता निष्फलता का हिसाब जांचा करते थे। जिस चरित्र बल के रहने से जीवन की समस्त व्यर्थताओं के बीच मनुष्य आदर्श भ्रष्ट नहीं होता, सम्पद् विपद् में, सफलता निष्फलता में, जीवन की सब अवस्थाओं में जिस चरित्र बल के जोर पर मनुष्य अपने आदर्श को चिपट कर पकड़े रह सकता है विप्लवियों के बीच वैसे चरित्र वाले लोग जिस परिमाण में पाये जाते हैं, विप्लव दल के बाहर कुछ एक महाप्राण नेताओं को छोड़ कर वैसे शक्त-चरित्र के आदमी पाना दुर्लभ है। और

विप्लव दल में वैसे चरित्र का अभाव न था इसी कारण विपम विपत्ति के दिनों में भी वे चञ्चल नहीं होते और पथ को दुर्गम देख कर वे लोग कभी पीछे नहीं फिरते। इसी लिए पजाब की विप्लव चेष्टा नष्ट हो जाने पर भी भारत में विप्लव का प्रयत्न उसी तरह चलता रहता है।

अपने दल के विश्वासघात के कारण पजाब में दो सौ आदमी पकड़े गये। पंजाब का विप्लवदल इस प्रकार प्राय नष्ट हो गया। जो जीवन मरण की खेल के साथी थे, अब वे प्राय सभी सरकार के कैदी हो गये। जीवन रहते भी मानो वे मर से गये। पग पग पर प्रमाणित होने लगा कि यह आग के साथ खेलना है। आज जो हमारा साथी था कल ही वह पुलिस के पंजे में फँस जाता है। आज जो विश्वासी था कल वह बिपत्ति में पड कर्तव्याकर्तव्य भूल जाता है, जीवन का आदर्श क्षुद्र स्वार्थ के नीचे दब जाता है। विप्लवियों के जितने केन्द्र थे एक एक कर के प्राय सभी प्रकट हो गये, लाहौर के मुहल्ले मुहल्ले में खाना तलाशी और धर पकड होने लगी। कहीं एक घर में बम मिला, कहीं तार काटने के औजार आदि। रासबिहारी जिस बैठक में रहते थे वह बैठक दो चार आदमियो के सिवाय किसी को जानी न थी इसी कारण तब भी वे निरापद रहे। पर हालात रोज बदल रहे थे। कब क्या होता कुछ कहा नहीं जाता था,—फिर नये सिरे से विप्लव की आयोजना होने लगी। पहले तीन एक सिक्खों को लाहौर के बाहर भेजने का सङ्कल्प हुआ। तागा

कर के ये तीन सिक्ख जाते थे। सड़क के एक मोड़ पर पुलिस ने तांगा रोका, कारण—कि ये सिक्ख थे, सिक्ख देखते ही पुलिस ने तांगा रोक कर कहा, एक बार उन्हें थाने जाना होगा और फिर उन का नाम धाम आदि लिखा जाने पर वे अपनी जाने की जगह् जा सकेंगे। उनके पास रिवाल्वरें थीं। इस के अलावा वे जानते थे कि पुलिस को पूर्ण सन्तोषजनक उत्तर वे दे न सकेंगे, कहा से आते हैं, कहा जाते हैं यह सब बतलाना उन के लिए उस समय सम्भव न था, अगत्या थाने जाने का अर्थ ही था अथाह समुद्र के तल में डूब जाना। इस दशा में बगैर कुछ कहे सुने पकडे न जा कर एक बार उन्हो ने अन्तिम बार भाग्य परीक्षा कर देखी। रिवाल्वर की गोली खा कर पुलिस के कई आदमी मरे और घायल हुए। तीन सिक्खों में से केवल एक को ही पकडा न जा सका, एक को एक रास्ता चलते मोटे मुस्टंडे मुसलमान ने धर गिराया, तीसरे को पुलिस ने ही पकडा। मुसलमान ने जिन को पकडा उनका नाम था जगत् सिंह। सिक्खों में भी उन दैत्याकार जगत्सिंह के मुकाबले का कोई न था। वे जैसे बलवान् और साहसी थे उन का देह भी ठीक वैसा ही दैत्य का सा था। पुलिस के साथ यह काण्ड कर के वे पुलिस की आख से बच कर निकल गये थे, किन्तु पूरी तरह बेखटके होने से पहले ही रास्ते के एक नलके से जल पी कर वे शान्ति से जब अपना मुँह पोंछते थे, उस समय उन की अपेक्षा भी बलवान् एक मुसलमान ने आकर दोनों हाथों

से उन के दोनों पैर इस तरह ज़ोर से दबा कर पकड लिये कि
जगत्‌सिंह फिर हिल न सके। जगत्‌सिंह धका न सम्भा
सके और गिर पड़े। मुकद्दमे में जगत्‌सिंह को फासी हुई
इस प्रकार रासबिहारी के कुछ विश्वस्त आदमी फिर पकड़े गये
यथा समय यह समाचार रासबिहारी के पास पहुंचा। उ
समय सारे लाहौर शहर में उन्हें आश्रय देने वाला कोई नह
था। उन का दल उस समय एक दम टूट गया था। उनके
साथी-सहायकों में से उस समय कुछ गुमनाम सिक्ख युवक
ही बचे थे। अपार समुद्र के मध्य में मानो वे उस समय पाल
विहीन डोंगी पर किसी तरह बह रहे थे। जो पुलिस वाले मरे
और घायल हुए वे भारतवासी थे, जो पकड़े गये, फांसी पर
चढे या जेल में सडने लगे वे भी भारतवासी थे और इन मे
आपस में कोई द्वेष कोई विरोध न था!

इस समय के कुछ !पहले ही मुसलमानों के बीच भी विप्लव
का षड्यन्त्र आरम्भ होता है। आगे इस मुसलमान जागृति की
विस्तृत आलोचना करनी होगी, इस लिए अब यहा इतना ही
कहना बस है कि तुर्की-इटालियन युद्ध के बाद से भारतीय
मुसलमानों में एक नई चेतना का सञ्चार होता है। किन्तु
हमारे दल के साथ मुसलमान दल का सयोग होता है ठीक
उस समय से, जिस समय की कहानी अब हम सुना रहे हैं।
उन के साथ परामर्श कर के रासबिहारी ने ठीक किया कि अब
काबुल जा कर ही पहले आश्रय लेना होगा, और वहीं ठहर कर

भारत की विप्लव चेष्टा को निमन्त्रित करना होगा। उन्हों ने एक मौलवी से कलमा पढना सीखा। खालिस मुसलमान के वेष मे ही काबुल जाना तय पाया। कुछ सिक्ख नेता भी रासविहारी के साथ जाते। सब ठीक हो चुका था, और दो एक दिन में ही यात्रा करनी होती, जब एक दिन दोपहर को रासविहारी बोल उठे "ना भाई, काबुल जाना अब नहीं होता, मुझे जान पडता है कि इस समय काबुल की ओर जाने से विपत्ति आने की सम्भावना है, दूसरी ओर लाहौर में भी अब घड़ी भर और देर करने की इच्छा नही होती, दिल कहता है इस समय देर करने से जरूर आफत आयेगी।" रासविहारी के दिल में जब जो आता था कभी उस से उलटा न करते थे। इस लिए उसी वक्त ठीक कर डाला कि उसी दिन रात की गाडी से काशी रवाना होंगे। काशी के दो युवक इस समय उन के पास थे। एक का नाम था विनायकराव कापले, वे मराठा थे पर बहुत दिन काशी मे रहे थे, दूसरे युवक का नाम हमारे समझने की सुविधा के लिए धरा जाता है गगाराम। यह बहुत दिन तक फरार रहे। रासविहारी और विनायकराव रात आठ बजे की गाड़ी पर रवाना हुए। तय हुआ कि गगाराम कुछ एक सिक्ख नेताओं को लेकर दो एक दिन बाद काशी आयेंगे। कर्त्तारसिंह हरणामसिंह और दूसरे कई सिक्ख नेताओं ने काबुल जाना ठीक किया।

रासविहारी जिस मकान मे रहते थे वही मकान सब

अपेक्षा बेखटके था, क्योंकि इस का पता बहुत लोगों को न था जिन सब मकानो पर वे भिन्न भिन्न लोगो को देखते सुनते थे, उन सब मकानो से इस समय कोई सम्बन्ध न रक्खा जाय, रास बिहारी का यह विशेष अनुरोध था। किन्तु यह होने पर भी गगाराम रासबिहारी को स्टेशन पर पहुंचा कर लौटते समय एक वार उसी पुराने मकान को झाक कर देख आने गये, उन की इच्छा थी यदि खटका न देखा तो अपने बहुत से कपड़े लत्ते जो उस मकान में थे लेते आवेंगे। किन्तु पुलिस ने पहले से ही इन सब मकानों के चारों ओर अपने आदमी रख छोडे थे। गगाराम ने उस मकान के निकट जा कर झाका ही था कि पुलिस ने उन्हें पकड लिया।

पकडे जाने के कुछ दिन के अन्दर ही गगाराम ने पुलिस के नजदीक सब बातें मान लीं। उन के इजहार से पुलिस ने उस मकान का सूराग भी पा लिया जिस में रासबिहारी अन्तिम बार ठहरे थे। उस मकान की खाना तलाशी करने पर पुलिस को उन के हाथ के लिखे दो एक कागज भी मिले। इस से पहले जिन्हों ने इजहार दिये थे उन से ही पुलिस को पता लग चुका था कि रासबिहारी फिर पजाब आये थे और इसी लाहौर में थे। गगाराम को पाकर उन्हों ने यह भी सुन लिया कि भयकर धर-पकड के समय भी रासबिहारी लाहौर मे ही थे। पुलिस यह भी जान गई कि रासबिहारी काशी से आये थे और फिर काशी वापिस चले गये हैं।

मौत के मुह से इसी प्रकार रासविहारी बहुत बार बचे थे। इस से बहुत दिन पहले की बात है, एक [और दफा रासविहारी इसी लाहौर में आये थे, उस समय तक वे देहरादून में ही नौकरी करते थे, कुछ दिन की छुट्टी ली थी, और दिल्ली हो कर लाहौर की तरफ दल का काम काज देखने आये थे। इधर दिल्ली में खानातलाशी और गिरफ्तारियां आरम्भ हो गई। रासविहारी इस बारे में कुछ भी न जानते थे। दिल्ली की खाना तलाशी के फलस्वरूप पुलिस को दीनानाथ नामी लाहौर के एक युवक का सन्धान मिला, एक आदमी के मकान पर रास बिहारी का ट्रङ्क और कपड़े-लत्ते आदि भी मिलगये। किन्तु लाहौर मे रासविहारी ठीक किस जगह है इसका सूराग पुलिस को न मिला। तो भी दीनानाथ का ठिकाना पुलिस को मिल गया, और लाहौर में उसे पकड़ लिया गया। तब भी रासबिहारी लाहौर में थे। दीनानाथ जिस दिन पकड़ा गया उस से अगले दिन साझ के समय डी ए वी कालेज बोर्डिंग के एक विद्यार्थी ने रासविहारी के पास आ कर उन्हे दीनानाथ की गिरफ्तारी की खबर दी। तब तक उन्हें यह खबर न मिली थी। सब की सलाह से तय पाया कि उसी रात रासबिहारी लाहौर छोड दें। रासबिहारी दिल्ली चले' गये। इस तरह सलाह मशवरा करते करते रात अधिक हो जाने पर वह विद्यार्थी बोर्डिंग में वापिस न गया, जिस मकान पर रासबिहारी थे वह रात उस ने भी वहां काट दी। सवेरे पुलिस ने वही मकान घेर

लिया। तीन एक युवक गिरफ्तार हुए पर रासविहारी न पकड़े गये। दीनानाथ जिस दिन पकडा गया उस के अगले दिन रात के समय उस ने सब बात खोल दी। यदि एक दिन पहले वह मुखबिर हो जाता तो रासबिहारी भी पकड लिये जाते।

इधर फिर दिल्ली आकर रासविहारी अमीरचन्द के मकान की ओर जाने को ही थे कि राह में उन्होंने थाने के नजदीक अमीरचन्द के मकान वाले नौकर को कहीं जाते देखा। उन्हे जरा सन्देह सा हुआ, नौकर को बुला कर पूछा अमीरचन्द कहां हैं। नौकर मालिक के दोस्त को पहचान कर बडी हडबड़ाहट से बोल उठा "बाबू हमारे मकान पर न जाय, मालिक को पुलिस पकड ले गई है, मैं उन के लिये थाने पर खाना ले जा रहा हू।" रासबिहारी के हाथ में उस समय जो रुपया पैसा था उस से कलकत्ते तक का रेल का टिकट खरीदा जा सकता था। वे फिर से स्टेशन लौट कर एक दम सीधा चन्दननगर चले आये। उस दिन से रासबिहारी का अज्ञातवास आरम्भ होता है। तब से "Thou art a wandering voice" (तू एक उडती फिरती आवाज है) की तरह यह पकडा वह पकडा होने पर भी मानो उन का पता नहीं मिलता। इस प्रकार बार बार विपत्ति से उद्धार पाकर भी वे फिर उसी विपत्ति में पडते रहे।

चाहे कितनी कठिन क्यों न हों इन का समाधान भी हमें करना ही होता।

और भी एक विचार ने हमें उस समय चिन्तित किया था। हम सोचते थे यदि दूसरे स्थानों में विप्लव आरम्भ हो जाय और हमारे यहा न हो तब हम लोगो की जो पहले से ही पुलिस की विष दृष्टि में पड चुके थे क्या गति होगी? और दूसरे स्थानों में विप्लव आरम्भ हुआ कि नहीं, सो भी जानेंगे कैसे? इस अवस्था में अन्यान्य केन्द्रो की पक्की बात जाने बिना काशी की पल्टन को उभाड देना युक्ति सगत होगा कि नहीं सो हम सोच कर तय न कर पाये थे। हम जानते थे कि काशी में हमारे अपने दल की जो कुछ शक्ति थी उस से हम काशी की अंग्रेज छावनी पर हमला कर सकते थे। ऐसी अवस्था मे देसी पल्टन को भी कोई एक पक्ष अवश्य लेना पडता, और हमारा विश्वास था कि देसी पल्टन हमारी तरफ ही योग देगी। इस तरह हम जानते थे कि इच्छा हो तो हम काशी में विप्लव का सूत्रपात कर सकते हैं। किन्तु और स्थानो की बात जाने बिना, विशेषत पजाब की बात जाने बिना कुछ करने की हिम्मत न होती थी। यदि अपने दल में काफी तादाद में अस्त्र शस्त्र रहते तो भी ऐसा करने की हिम्मत हो जाती। जो हो इन सब भावनाओं के बाद हम ने तय किया था कि रेलवेस्टेशन और तारघर के पास जाच पडताल कर के ही हमें इस बात का सशय दूर करना होगा कि पजाब की ओर से तार आने मे कुछ गोलमाल हुआ है

से अधिक उपयुक्त थे । हम आशा करते थे कि विप्लव आरम्भ होने पर इन मे से और शहर के हिन्दुस्तानी युवकों में से भी निश्चय मे बहुत से स्वेच्छासेवक मिलेंगे जो आग्रह पूर्वक हमारे विप्लव में साथ देंगे, और ऐसे भी बहुत से मिलेंगे जो स्थानीय काम के लिए काशी मे ही रह जायेंगे। उस दिन कल्पना की आखो से जब देखते थे कि काशी के गली मुहल्लों राह घाटो मे बगाली स्वेच्छासेवक हाथ में गोली भरी पिस्तौल लिये और कमर में पैनी कृपाण लटकाये दल बाँधे घूम रहे हैं तब गर्व से हमारी छाती दस हाथ फूल उठती थी। हम ने तय किया था कि अपने सब विप्लवियों के परिवारो का काशी के ही किसी एक स्थान में इकट्ठा रहने का बन्दोबस्त कर दिया जायगा। हमारे इन स्वेच्छासेवको का दल जिस प्रकार सारी काशी का अमन कायम रखता उसी प्रकार हमारे परिवारों का भी ध्यान रखता ।

हम यह भी जानते थे कि विप्लव आरम्भ होने के बाद सिपाही लोग ज्यों ही जान पायेंगे कि अस्त्र शस्त्र जो कुछ है सो सब उन्हीं के पास है और उन की सहायता बिना हम देश के साधारण लोग कुछ भी करने में असमर्थ हैं,तब स्वभावत ही वे सिपाही स्वेच्छाचारी हो जायेंगे । किन्तु दूसरी तरफ हमने यह भी सोच देखा था कि एक बार विप्लव में साथ देने के बाद जब तक कोई एक फैसला न हो जायगा तब तक ये सिपाही लोग निश्चिन्त न रह सकेंगे, और फलत अपने स्वार्थ

इस में सन्देह नहीं । जिस समय सैकड़ों पल्टनें विदेश के युद्ध-क्षेत्र में रोज ही भेजी जाती हों उस समय बलवा शुरु हो जाने पर सचमुच अधिकांश देशी पल्टन हमारी ओर आ जातीं, हमारी यह आशा एक दम निर्मूल या भ्रमपूर्ण न थी । सभी पल्टनों से हमें आशा का सवाद मिला हो सो भी न था। एक तरफ जहा एक सिक्ख पल्टन के सिपाहियों ने हमारे दल के एक तरुण युवक के मुह से बलवा नजदीक होने की खबर पा कर आग्रह और उत्साह के साथ उसी रात पल्टन के मुखियों को बुला कर गुप्त रूप से एक बैठक कर के तय किया था कि पहले वे जरूर न कुछ करेंगे, पर सच मुच बलवा शुरु हो जाने पर वे निश्चय से बलवे में साथ देंगे, वहा दूसरी तरफ एक और जगह की मुसलमान पल्टन ने यह उत्तर दिया था कि "तुम क्या हमको बिलकुल बच्चा समझते हो ? अंग्रेजों के साथ युद्ध करना क्या लड़कों का खेल है ? तुम्हारी तरफ कोई नवाब या राजा-महाराजा है ? जब नहीं है तो तुम्हें रुपये से मदद कौन देगा ? इसके अलावा बलवा शुरु होते ही वायरलेस टेलीग्राफी (बेतार की तार) पर उसी समय भारत के चारों ओर खबर चली जायगी और थोड़े दिनों में चारो ओर की फौज तुम्हारे ऊपर आ पड़ेगी। इस अवस्था में क्या तुम किसी तरह टिक सकोगे ? तुम्हारे हाथ में अस्त्र-शस्त्र ही कितने हैं ? तुम्हारी सामरिक शिक्षा दीक्षा ही क्या है ? ये बातें क्या सोच देखी हैं ? हम लोग न बच्चे हैं न पागल,

विप्लव का इतिहास देखने से भी इस के प्रमाण मिलते हैं। सो जो भी हो, हम लोगों ने जो किया था वही लिखे देता हू, उस से यदि हमारी कुछ नादानी का परिचय मिले तो लज्जित नहीं हू।

स्टेशन और तारघर का हाल चाल देख आने के लिए २१ फरवरी रविवार को मैं वाइक पर चढ कर काशी कैन्टूनमेंन्ट के स्टेशन पर शाम के समय आया था। स्टेशन पर आ कर सुना कि उस समय तक ट्रेन अथवा टेलीग्राफ का कुछ भी गोलमाल नहीं हुआ। उसी स्टेशन पर उसी दिन शाम के वक्त पल्टन के एक हवलदार के आने की वात थी। उस की बाट जोहते जोहते प्लैटफार्म पर घूमते फिरते दिल में आई कि अखवार खरीद कर पढू। पायोनियर खरीद कर देखा लाहौर में धर पकड आरम्भ हो गई है और युरोपियन फौज शहर में पिकेट कर रही है, अर्थात् लडाई के समय की तरह सावधान हो कर डेरे डाल कर पडी है। समझ गया काम कुछ उलट पुलट हो गया है। झट शहर मे लौट आया। हमें अब सन्देह नहीं रहा कि इस वार की विप्लव-योजना भी छिन्न भिन्न हो गई। किन्तु ठीक उसी दिन सिंगापुर में वलवा शुरू हो जाता है। सिगापुर के साथ सीधे तौर पर हम लोगों का कोई सम्वन्ध न था, यह इतिहास एक और परिच्छेद मे वतलाया जायगा। यदि सिंगापुर भारत के अन्दर की कोई जगह होती तो भारत की अवस्था अत्यन्त भयानक रूप धारण कर लेती

बेशक बडी भावुक जाति है, पर भाव के उन्माद में सिक्ख लोग घडी भर में जैसे एक असम्भव काण्ड कर दे सकते हैं वैसे भारत की और कोई जाति नहीं कर सकती। सिक्खों के कहने और करने के बीच अन्तर बहुत थोडा रहता है। इस लिए मैं समझता हू कि ऐसा कोई काम नहीं जिसे ये सिक्ख लोग उपयुक्त नेतृत्व में परिचालित होने पर न कर सकें। सिक्ख समाज में आज केवल एक ही चीज़ का अभाव दीखता है, और उस अभाव को पूरा करने के लिए सिक्ख समाज इस प्रकार जागृत हो गया है कि वह भी थोडे ही दिनों में नहीं रहेगा। ससार की विचार-धारा के साथ रहने के लिए जैसी शिक्षा चाहिए, सिक्ख-समाज में वैसी शिक्षा का बिलकुल अभाव है, और इस अभाव को दूर करने के लिए छोटे छोटे सिक्ख जमींदार भी जैसी आर्थिक सहायता करते हैं वैसा दृष्टान्त भारत की और किसी जाति में नहीं पाया जाता। तो भी सिक्खों में सकीर्णता बडी है, इस लिए सिक्ख-समाज के लिए वे जो कुछ करते हैं उस का सौ में से एक हिस्सा भी दूसरे समाजों के लिए नहीं कर सकते। सिक्ख सम्प्रदाय में से बहुतों का विश्वास है कि यदि वे उपयुक्त शक्ति सामर्थ्य का उपार्जन कर लें तो वे फिर भारत में अपना साम्राज्य खडा कर सकते हैं। जो हो, वे फिर एक साम्राज्य खडा कर सकें या न कर सकें, भविष्य में यदि उन में उपयुक्त शिक्षा प्रचार न होगा तो भारत के भाग्य में बहुत दु:ख लिखे हैं

में सन्देह नहीं।

खैर, जाने दो इन बातों को, जो बात हम कह रहे थे उसे ही फिर कहे कह रहे थे कि किस तरह पजाव की दुरवस्था की खबर हम ने काशी में जान पाई थी। पायोनियर में यह कुसमाचार देख कर हमें बड़ी चोट लगी । हमें मालूम होने लगा मानो हम भारतवासियों का कोई सकल्प भी अन्त तक नहीं रहता। हम जो सोचेंगे कुछ भी न होगा, और अग्रेज लोग जो करने की बात कहेंगे उसी में कृतकार्य हो जायेंगे। न जाने विधाता का यह कैसा ख्याल है।

भारतवासी का जीवन मानो केवल दूसरों के खेल की सामग्री है उस को अपनी मानो कोई साध कोई वासना ही नहीं है, या वह है भी तो मानो उसे पूर्ण करने की शक्ति उस में नहीं है, भारतवासी की सब चेष्टाओ का परिणाम मानो केवल व्यर्थता से पूर्ण है, भारत का इतिहास भी वैसे ही एक विराट् व्यर्थता के करुण उदास सुर मे भरा है। भारत के इतिहास की तरह भारत की विप्लव-चेष्टा भी एक सिरे से व्यर्थता का ही इतिहास है।

काशी अञ्चल की कहानी (२)

रेलवे स्टेशन से मुरझाया हुआ घर वापिस आया। घर में अनेक साथी मेरी प्रतीक्षा में बैठे थे। मुहल्ले मुहल्ले में कुछ कुछ युवकों के दल भी हमारे आदेश की प्रतीक्षा में थे। उन्हे बलवे की बात मालूम न थी, पर इतना तो सब जानते थे कि शायद कोई भीषण काण्ड हो सकता है जिस से जान हथेली पर रख के उन्हें इस कार्य में साथ देना होगा। साथियों ने सब सुना। बलवा रुक गया सो समझ लिया, तो भी दो तीन दिन बड़ी उत्कण्ठा में कटे। जो हुआ सो एक दम आशा के विपरीत रहा हो सो भी नहीं, कारण यह कि इस व्यर्थता की आशंका बड़े घोर से पहले ही दिल में उठी थी, इस लिए पायोनियर की खबर सुन कर हम सब मानो मौन स्वर से बोल उठे "यही तो कहते थे, इतनी जल्दी क्या भारत का भाग्य पलट जायगा!"— दो तीन दिन में ही लाहौर में तांगे की दुर्घटना का समाचार अखबार में पढा, हम में से कइयों ने सोचा कहीं भाग जाने वाले व्यक्ति रासबिहारी ही न हों, किसी किसी ने कहा, नहीं, रासबिहारी निश्चय से वहा न थे, कारण कि रासबिहारी का भाग्य बड़ा उज्ज्वल है, उन का भाग्य ही उन की रक्षा करता है, इसी लिए ऐसी विपत्तियों के मुह में वे कभी नहीं पड सकते। इस के सिवाय अखबार में तो साफ ही लिखा है कि तांगे के यात्री सिक्ख थे। इस प्रकार रासबिहारी का भला बुरा सोचते सोचते हमारे दिन कटने लगे। क्यों कर और कितने

दिन तक रासविहारी बेखटके काशी आ पहुंचेंगे इसी भावना में हम अस्थिर हो कर दिन गिनने लगे। पजाब की दुर्बलता के कारण काशी के दल को भी कहीं चोट न लगे इसी आशका मे हम कई आदमी घर पर बिलकुल न रहते थे, केवल बीच बीच मे घर आकर खोज ले जाते थे कि पुलिस का उत्पात वढ रहा है या घट रहा है। उस समय भी घर पर बराबर पुलिस का पहरा था। उन की आखो में धूल डाल कर ही सब काम करना होता था। काशी में हम लोग इसी प्रकार दिन काटने लगे।

इधर पजाब से कर्त्तारसिंह और हरनामसिंह काबुल की ओर रवाना हुए। राह में उन्हे न जाने क्या सूझी वे फिर सिपाहियों मे बलवे का प्रचार करने के लिए छावनी में घुस पडे। इस समय जगह जगह सिपाहियों मे धर पकड आरम्भ हो गई थी। इस लिए स्वभावत उन के बीच एक आतङ्क सा छाया दीखता था। इस अवस्था में सिपाहियों के बीच फिर प्रचार करने जाना कर्त्तारसिंह के लिए हरगिज उचित न था। फलत सिपाहियों ने ही कर्त्तारसिह और हरनामसिंह को पकडवा दिया। उन्हें लाहौर लाया गया। जंजीरों में जकडे हुए कर्त्तारसिंह की तरुण मुखश्री मे वीरत्व की ऐसी महिमा झलकती थी कि उस मूर्त्ति को देख कर शत्रु मित्र सभी एक साथ मुग्ध हो जाते थे। भाई परमानन्द ने अपनी "आप बीती" नामक पुस्तक में उस दृश्य का मर्म स्पर्शी भाषा मे वर्णन किया है। ऊचे दर्जे के अंग्रेज राज्याधिकारी भी वीर को

लाहोर सेंट्रल जेल म सिक्ख और मराठा
रुधिर की एक साथ आहुति देनेवाली

युगलमूर्त्ति

करतारसिंह

पिंगले

उपयुक्त मर्यादा देने में प्राय त्रुटि नहीं करते। पिछले विप्लव-युग की कहानी देखते हुए साधारण रूप से यह कहा जा सकता है कि अंग्रेज राज्याधिकारी बहुत बार विप्लवियों के वीरत्व और गुणों पर मुग्ध हो उठा करते थे।

इधर एकाएक एक दिन सुना, रासूदा काशी आ गये। रासूदा से भेंट होने पर पजाब की सब अवस्था जान पाया। एक तो पजाब का समाचार बगाल में देना आवश्यक था, दूसरे मेरा काशी में ठहरना किसी तरह अभीष्ट न था, इस लिए दादा ने मुझे एक दम काशी छोड जाने को कहा। हमारा नियम था कोई घर पकड आरम्भ होने पर झट से पहले का बन्दोबस्त जड़ से बदल देते थे, अर्थात् मनुष्य के मन का हम पूरी तरह कभी विश्वास न करते थे, क्योंकि हम जानते थे मनुष्य अपने मन को आप ही ठीक ठीक नहीं पहचानता, इस लिए किसी के पकडा जाने पर हम उसी क्षण सावधान हो जाते थे।

इसी समय काशी में पुलिस की निगरानी ऐसी कडी हो गई कि कोई भी नया बगाली पुलिस की नजर बचा कर आ ही न सकता था। बगाली टोले के हर मुहल्ले मे पुलिस हरेक घर जाकर खोज लेती थी कि वहा कोई नया बगाली तो नहीं आया। चन्दन नगर और बगाल में रासबिहारी को पहचानने वाले खुफिया पुलिस के जितने कारिन्दे थे सब को काशी के भिन्न भिन्न स्टेशनों पर पहरे पर नियुक्त किया गया था। चौबीस घण्टा

ऐसा ही पहरा रहता। इस के अलावा काशी में जो लोग पुलिस की विष-दृष्टि में पड चुके थे उन के ऊपर भी जहा तक कड़ा पहरा रखना पुलिस के लिए सम्भव था उस में पुलिस जरा भी कसर न छोडती थी। जो कोई भी बगाली काशी में आते उन सभी का नाम धाम पुलिस लिख लेती, और फिर मकान पर जा कर खोज कर देखती कि उन की बात सच है या नहीं। इस प्रकार पुलिस काशी में रासबिहारी की टोह लेती थी। और ऐसी भीषण अवस्था में भी रासबिहारी बेखटके काशी आ पहुचे थे।

हम कुछ लोग पहले से ही सावधान थे। अर्थात बहुत थोडा समय ही घर पर टिकते थे। अधिक समय जिस जगह रहते थे उसे दल के कुछ आदमियों को छोड़ कर कोई न जानता था। और रासूदा ही घर घर जा कर रात को हमारा पता लेते थे। क्योंकि रासबिहारी को काशी में कोई बहुत पहचानता न था। काशी में हमारा खूब अच्छा दल था इसी लिए रासबिहारी ऐसी अवस्था में भी काशी मे अनायास एक महीने से ऊपर रह पाये थे। रासबिहारी को पकडने के लिए ब्रिटिश गवर्नमेंट ने कमर कस ली, और काशी के दल को बचाने के लिए रासबिहारी ने भी कमर कस ली। काशी के युवक लोग चुप चाप घरों मे बैठे और रासबिहारी ही घर घर जा कर पूछताछ करने लगे। किसे किस उपाय से काशी से बाहर भेज दें प्रत्येक युवक के निकट जा कर रासबिहारी रोज यही बात ठीक करते। पहले मैं काशी

छोड गया, फिर एक और मित्र छोड़ गये। इसी तरह धीरे धीरे बहुत लोग काशी से खिसक कर बंगाल आ गये। जो युक्त प्रदेश के ही थे वे अपना शहर छोड कर दूसरे शहर में आ रहे, जैसे काशी वाले लखनऊ गये और लखनऊ वाले काशी आगये।

मेरे बंगाल में खिसक आने के कुछ ही दिन बाद हमारे काशी वाले मकान की खानातलाशी हुई, इस के थोडे ही दिन बाद काशी के एक और युवक के घर की खानातलाशी हुई। वे युवक उस समय काशी में ही थे। पर अपने घर पर न रहते थे। तडके तीन बजे पुलिस ने घर घेर लिया, पर सबेरे व्यर्थ-मनोरथ हो कर लौट गई। रासबिहारी के पास उस युवक ने सुना कि उन के घर की खानातलाशी हुई है। और कुछ दिन बाद विनायकराव कापले के घर की भी तलाशी हुई। विनायक उस समय गङ्गा स्नान करके लौटते थे। वे रहते थे भाडे के मकान पर, किन्तु भोजन करते थे अपने ही मकान पर। मकान के नज़-दीक आने पर विनायक ने सुना कि उन के मकान पर अनेक साहब लोग उन की प्रतीक्षा कर रहे हैं। यह बात सुनते ही विनायक भी अन्तर्धान हो गये। इस प्रकार पुलिस किसी को भी न पा सकी। उस समय भी रासबिहारी काशी में ही रहे।

जिस समय सरकार की तरफ का गवाह विभूति स्पेशल ट्राइब्युनल की अदालत में इन सब बातों का विवरण करने लगा उस समय अदालत के जज भी आखें फाड कर केवल विभूति के मुह की ओर ताक्ते रहे और कुछ देर के लिए

लिखना भी भूल गये। सरकारी कौन्सल और हमारी ओर के वकील वैरिस्टर आदि भी वैसे ही आग्रह और अचम्भे के साथ निर्वाक हो कर रासविहारी के अद्भुत कामों की कहानी सुनने लग गये,और बीच बीच में कोई कोई हमारी ओर मुह कर के धीरे से बोल उठते "ओ , रासबिहारी की ऐसी हिम्मत है !" हम भी उस समय आनन्द और गर्व से गद्गद हो जाते थे । एक वार विभूति के मुह की ओर देख कर समझने की चेष्टा की थी कि विभूति क्या सोचता है। ख्याल आता है मन में उस समय इस बात का दुःख मनाया था कि विभूति क्यो हमारे गर्व और आनन्द में भाग नहीं लेता। इस समय ठीक याद नहीं आता कि विभूति भी सचमुच ऐसी मुखबरी करने के बाद गर्व अनुभव करता था कि नहीं ।

इस प्रकार काशी के अनेक युवक बगाल में आ इकट्ठे हुए। जिन लोगो का पजाब मे कोई सीधा सम्बन्ध न हुआ था, अर्थात् जिन का नाम धाम पजाब मे कोई न जानता था, वे काशी में ही रहे। ऐसे युवकों की सख्या भी कम न थी, और इसी लिए ऐसे भीषण सङ्कट के समय भी रासविहारी बेखटके काशी में रह सके थे। जिन युवको को कोई विप्लवी रूप से नहीं जानता जिन पर कोई सन्देह भी नहीं करता, ऐसे लोगो की सख्या जिस विप्लव दल में जितनी अधिक हो उतना ही वह दल बलशाली और कार्यक्षम होता है।

काशी में हम लोग इस प्रकार सतर्क हो गये, पर पजाब के

नेताओं में से लगभग सभी एक एक कर के पकड़ लिये गये। डा० मथुरासिंह आदि केवल दो तीन आदमी कावुल भाग जाने में समर्थ हुए। पिंगले तब भी पकड़े न गये थे। पजाब की गोलमाल के वाद पिंगले भी काशी की तरफ ही आये थे। राह में वे भी कर्तारसिंह की तरह मेरठ छावनी में विप्लव फैलाने के लिए घुस पड़े। इस प्रकार मेरठ छावनी के एक मुसलमान दफादार के साथ उन की वातचीत हुई। उस दफादार ने पिंगले के नजदीक वल्वे की वात मे खूब उत्साह दिखाया, और पिंगले के साथ ही काशी आ गया। किन्तु रासविहारी ने पिंगले को ऐसे काम में हाथ डालने से खास तौर से रोका। उन्हों ने कहा अब सिपाहियों में जाने का काम नहीं, पर पिंगले निरुत्साह न हुए। अन्त में दादा को भी इस काम मे स्वीकृति देनी पड़ी। पिंगले को खूब वडी किस्म के दस वम देकर भेजा गया। ये सव वम इतने वडे थे कि इन मे से एक भी जिस जगह गिरता उस जगह ओर कोई चिह्न तक न रहता। वारकों पर पडता तो अनेक वारकें एक ही साथ भूमिसात् हो जातीं। राउलट कमिटी की रिपोर्ट मे इन्हीं वमों के सम्बन्ध में लिखा है Sufficient to annihilate half a regiment अर्थात् आधी रेजिमेंट को समूल ध्वस कर देने की शक्ति इन वमों मे थी।—अन्त में रासविहारी का सन्देह ठीक ही निकला। उस दफादार ने पिंगले को अपनी छावनी में ले जा कर वमों-सहित पकड़ा दिया। मेरठ के प्राय १०-११ सिपाहियों ने भी वाद में फासी के तख्ते पर

घर के सामने ही एक गुप्तचर रहता था। सभी गुप्तचरों के मुँह से पुलिस ने मेरे घर आने की खबर पाई थी, पर घर की तलाशी लेने पर मुझे न पा कर वे सब अत्यन्त आश्चर्य करने लगे यहा तक कि कई पुलिस वालों ने समझा मैं अभी भागा हू और सडकों पर दौडधूप भी की। पीछे कलकत्ते जा कर सुना कि पुलिस मुझे पकडने आई तो पुलिस के सामने ही कहते हैं मैं छतों छतो पर भागता हुआ गायब हो गया, और वह सब देखती हुई भी कुछ न कर सकी।

राजपूताना के एक युवक के साथ दिल्ली आ पहुचा। अपने दल के ही एक युवक के डेरे पर अतिथि हुआ। दिल्ली मे जो करना था सो किया। बात थी कि दिल्ली मे ही पिंगले के साथ भेंट होगी। उस समय के होम मेम्बर सर रेजिनल्ड क्रैडक साहेब तब दिल्ली में न थे, और एक दो और कारण थे, जिस से दिल्ली में कुछ किया नहीं गया।

दिल्ली मे एक दिन बाइक पर घूमते घूमते साझ हो गई थी। रास्ते में जगह जगह लिखा था शाम को साढे छ बजे ब॰ जला लेना चाहिए। मैंने भी बाइक की बत्ती जला ली। मे बत्ती कुछ खराब थी। मे बाइक पर तेजी से जाते हुए ज्यो। रास्ते क एक मोड से घूमा त्यों ही देखा कि एक अंग्रेज घुड़ सवार बडे गेग से घोडा दौडाये चला आता है। मुझे देखते ह मेरी ओर हाथ बढा कर उस ने अगुली से इशारा किय "ठहरो" मैं भी झट बाइक से नीचे उतर पड़ा। घुड सवार ने

मेरे नजदीक आ कर प्रश्न किया "बत्ती क्यों नहीं जलाई?" तब देखा बाइक की बत्ता बुझ गई है। मैंने कहा "बत्ती अभी बुझ गई है, हाथ लगा कर देखो अब भी गरम है।" "बत्ती जलाओ" कह कर अंग्रेज घुडसवार ने घोडा छोड दिया, मैं कुछ देर एक टक उस दर्पोन्मत्त अंग्रेज घुडसवार की ओर देखता रह गया, और सोचने लगा "हाय रे! कब हमारा भी वह दिन आयगा! कब हम भी घोडे पर चढ कर इस तरह माथा ऊंचा करके छाती फुलाये घूमेंगे।"

मेरठ में पिंगले कृतकार्य हो या न हों, दिल्ली में हमें कुछ काम करना था। इसी बीच समाचार पत्र में पढा मेरठ छावनी मे पिंगले पकड़े गये। और ठीक इसी समय मैं भी बुरी तरह बीमार पड गया। लाचार मुझे दिल्ली छोडनी पडी। इस बीमारी में मैं १५ दिन एक साथ खाट पर पडा रहा। दूसरे सप्ताह न्यूमोनिया के लक्षण भी दिखाई दिये। उस समय जिन सब युवकों ने मेरी सेवा की थी, उन के यत्न की बात मैं जीवन भर भूल नहीं सकता। मुझे उस समय उठने की भी ताकत न थी। उस समय वहाँ युवकगण मेरा मल मूत्र तक साफ करते थे।

उधर पंजाब मे लाहौर षड्यन्त्र के मामले की सुनाई आरम्भ हो गई। लाहौर के मामले में शायद अनेक बातें सुनने लायक हैं। किन्तु मुझे इस विषय मे कुछ विशेष नहीं कहना है।

इस प्रसंग में सब से पहले यह बात ध्यान में आती है

कि इस मामले में १०० विप्लवियों में से प्राय १० जने विप्लवधर्म को तिलाञ्जलि दे कर अपने ही वन्धुओं को विपत्ति के मुह में डालने से भी नहीं चूके । इन सब मुखविरों के विषय मे देश में अनेक आलोचनायें हुई हैं। इन्हीं को देख कर ही वहुत लोगों की विप्लवियों के विषय मे बडी हीन धारणा हो गई है । पर एक बात याद रहे कि ईसा मसीह के शिष्यों के बीच भी ऐसी विश्वासघातकता का दृष्टान्त पाया जाता है। मसीह जैसे महापुरुष के सम्पर्क में आने के वाद भी मनुष्य का अध पतन हो जाता है तव अन्य स्थानों में ऐसा अध पतन हो जाने में आश्चर्य ही क्या है ?* हमारा विश्वास है कि

* नागपुर के झण्डा-सत्याग्रह में १७६४ स्वय सेवकों में से दो सौ स अधिक माफी माग करके छुटे थे। यह भी न भूलना होगा कि इन स्वेच्छा सेवकों को सारा देश एक आवाज से प्रोत्साहना और साधुवाद दे रहा था, चारों तरफ धन्य २ की गूज सुन पडती थी, इनके सगे-सम्बन्धी इनकी वीरता पर अभिमान करते थे, यहा तक कि बहुतों की स्त्रिया और बहनें "युद्ध चेत्र" में साथ उपस्थित थीं और जेल में साथ जाने तक को तैयार थीं। दूसरी तरफ यदि ये लोग सिर न झुकाते तो इन्हें औसतन केवल तीन माह की सादी या कड़ी कैद मिलती। षड्यन्त्र के अपराधियों के लिए प्रत्येक बात इस से ठीक उल्टी थी। कहना पडता है कि भारतवासियों की रीढ की हड्डी अभी तक बहुत कमजोर है और वे गर्दन सीधी करके खडा होना नहीं जानते। वे आध्यात्मिकता की कितनी ही डींगें हाका करें, घटनायें सिद्ध करती हैं कि चरित्रबल में वे ससार की सब स्वतन्त्र जातियों से पीछे है।

विप्लव का काम जितना आगे बढ़ेगा विश्वासघातकता भी उसी परिमाण में बढ़ेगी । इन सब षड्यन्त्रों के मामलों में जैसे एक तरफ विश्वासघात के दृष्टान्त पाये जाते हैं, वैसे ही दूसरी तरफ वीरता की भी अद्भुत कीर्ति हम देख पाते हैं । जो हो लाहौर षड्यन्त्र मामले की केवल दो बातें मैं पाठकों को बताए देता हूं ।—अदालत में विचार के समय ज्वालासिंह नामी एक सिक्ख ने अभियुक्तों के खिलाफ के विषय में एक उज्र पेश किया। केवल इसी अपराध पर जेल के सुपरिन्टेन्डेन्ट ने उन्हें तीस बेंत की सजा दी । आश्चर्य की बात है कि पंजाब में कहीं भी इसका जरा भी प्रतिवाद नहीं हुआ । कर्त्तारसिंह ने मुकद्दमे के समय अदालत में सब बातें स्वीकार कर लीं। पर अंग्रेज जज ने पहले दिन उनकी किसी बात को दर्ज न किया । उन्हों ने कर्त्तारसिंह को समझा कर कहा कि इन की स्वीकारोक्ति से उन का अपना केस (Case) बहुत खराब हो जायगा । इस पर भी कर्त्तारसिंह ने अपना मत न बदला, उन्हों [illegible] घटनाओं का दायित्व स्वयं अपने ही सिर पर लिया । [illegible] जज ने कहा "कर्त्तारसिंह आज मैंने तुम्हारी बात नहीं सुनी, तुम्हें एक दिन का और समय देता हूं, [illegible] विचार कर कल जो कहना हो कहना।" [illegible] ने सब दायित्व अपने ही सिर पर ले [illegible] वीरता पर सब मुग्ध हो गये । भारत के [illegible] नाम सदा बना रहेगा । भारत के

लाहौर षड्यन्त्र केस में कालापानी की सज़ा पानेवाले दो अभियुक्त

सरदार ज्वालासिंह

पृथ्वीसिंह

"सुपरिण्टेण्डेण्ट ने उन्हें तीस बेंतों की सजा दी।

पृथ्वीसिंह के स्वाधीनता प्रेमी देह को जेल की चहारदीवारी बन्द करके नहीं रख सकी। अरसा हुआ आप दक्षिण की एक जेल से फ़रार हो चुके हैं। आजकल आप लापता हैं।

विप्लव का काम जितना आगे बढ़ेगा विश्वासघातकता भी उसी परिमाण में बढ़ेगी। इन सब षड्यन्त्रों के मामलों में जैसे एक तरफ विश्वासघात के दृष्टान्त पाये जाते हैं, वैसे ही दूसरी तरफ वीरता की भी अद्भुत कीर्ति हम देख पाते हैं। जो हो लाहौर षड्यन्त्र मामले की केवल दो बातें मैं पाठकों को बताए देता हूँ।—अदालत में विचार के समय ज्वालासिंह नामी एक सिक्ख ने अभियुक्तों के शिनाख्त के विषय मे एक उज्र पेश किया। केवल इसी अपराध पर जेल के सुपरिन्टेन्डेन्ट ने उन्हे तीस बेंतों की सजा दी। आश्चर्य की बात है कि पजाब में कहीं भी उसका जरा भी प्रतिवाद नहीं हुआ। कर्त्तारसिंह ने मुकदमे के समय अदालत मे सब बाते स्वीकार कर लीं। पर अंग्रेज जज ने पहले दिन उनकी किसी बात को दर्ज न किया। उन्हों ने कर्त्तारसिंह को समझा कर कहा कि उन की स्वीकारोक्ति से उन का अपना केस (Case) बहुत खराब हो जायगा। इस पर भी कर्त्तारसिंह ने अपना मत न बदला, उन्हों ने सब घटनाओं का दायित्व स्वयं अपने ही सिर पर लिया। बेबस हो कर जज ने कहा "कर्त्तारसिंह आज मैंने तुम्हारी कोई भी बात नहीं सुनी, तुम्हें एक दिन का और समय देता हूँ, अच्छी तरह सोच विचार कर कल जो कहना हो कहना।" दूसरे दिन फिर कर्त्तारसिंह ने सब दायित्व अपने ही सिर पर ले लिया। उन की शान्त वीरता पर सब मुग्ध हो गये। भारत के इतिहास में कर्त्तारसिंह का　　। बना रहेगा।

विप्लव युग को भी कर्त्तारसिंह ने स्मरणीय कर दिया।

इस षड्यन्त्र के मामले में लाहौर डी ए वी कालेज भूतपूर्व अध्यापक भाई परमानन्द भी पकड़े गये, उन्हें भी अन्त आजन्म कालापानी का दण्ड मिला। लाहौर जेल में रहते सम वे कर्त्तारसिंह के पास की कोठरी ही मे बन्द थे। उस सम प्राय सभी राजनैतिक अपराधी एक ही वारक में वन्द रहते थे रात को वे सभी अपनी अपनी कोठरी से एक दूसरे के साथ ग शप करते थे। कहते हैं एक दिन भाई परमानन्द ने कर्त्ता सिंह से कहा "देखो यदि मालूम होता कि अन्त में मुझे भ यही दुर्गति भोगनी होगी तो मैं भी तुम्हारे काम में पूरे उद्य से योग देता।" भाई परमानन्द के एक ओर कर्त्तारसिंह और दूसरी ओर की कोठरी में एक और सिक्ख थे। वे अ भी बचे हुए हैं और उन्हीं से मैंने उक्त घटना अन्दमान सुनी थी।

तीसरा परिच्छेद

दिल्ली में

(१) प्रताप की कहानी

राजपूताना के जिन युवक के साथ मैं दिल्ली गया उन का नाम था प्रतापसिंह । ये राजपूताना के चारण वंश से थे। चारण लोग राजपूतों में पूज्य माने जाते हैं। प्रताप के पिता का नाम था सर्दार केसरी सिंह । वे उदयपुर के राणा के विशेष प्रिय थे, और अब मुझे ठीक याद नहीं, या तो प्रताप के पिता या उनके दादा उदयपुर के राणा के मन्त्री पद तक पहुंचे थे। इनकी जागीर मेवाड के अन्तर्गत शाहपुरा राज्य में थी।

एक दिन होता था जब यही राजपूताना वीरों का लीला-निकेतन कहा जाता था, एक दिन इसी राजपूताना में भीष्म के समान महापुरुषों का भी आविर्भाव हुआ था, बंगाल की कल्पना दृष्टि में शायद आज भी राजपूताना उसी अतीत युग की शूरता वीरता और उदारता की प्रतिमूर्ति-रूप ही प्रतीत होता है, किन्तु पौराणिक युग का वह गौरवमण्डित राजपूताना आज नहीं है। तथापि राजपूताना के आज बिलकुल अध पतित हो जाने पर भी उस अतीत युग के संस्कार आज भी प्रत्येक राजपूतानावासी

के हृदय मे अङ्कित हैं, प्रताप-परिवार की कहानी देख क
बात मेरे मन में स्वत जाग उठती है।

यह परिवार राजपूताना के गरय मान्य समृद्ध जर्मींद
गिना जाता था, किन्तु स्वदेश-प्रीति और तेजस्विता की ए
उन्हें अपना घर बार बरबाद करना पडा।

सब से पहले दिल्ली षड्यन्त्र के मामले के सम्बन्ध में
और प्रताप के बहनोई पकडे गये। किन्तु उन के विरुद्ध
विशेप प्रमाण न रहने से उस बार उन का छुटकारा हो
इस के कुछ ही दिन बाद कोटा में ही एक और राज
मामले में प्रताप के पिता सर्दार केसरीसिंह जी को आ
कालापानी का दण्ड हुआ, और प्रताप के एक सगे चचा के
भी वारन्ट निकला, सम्भवत आज भी वे पकड़े नहीं गये। वे
सिंह जी का स्वास्थ्य अच्छा न रहने से उन्हें अन्दमान
जाना पडा, देश की जेलों मे ही रहना पडा *।

इस मामले के फल स्वरूप सर्दार केसरीसिंह जी की
उन के छोटे भाई की समूची सम्पत्ति तो ज़ब्त हुई ही, इ
अलावा उन के जो भाई राजनीति के पास फटकते भी न
उन की भी सारी सम्पत्ति जब्त होगई। इस तरह वे समृद्धि-स
जागीरदार की अवस्था से एक दम रास्ते क भिखारी हो ग

---

* बाद में जुलाई सन् १६१६ में उन्हें छोड़ दिया गया था, ५२ उ

प्रताप की माता के दुःखों की उस समय कोई सीमा न थी। आज एक सम्बन्धी के पास रहती तो कल दूसरे सम्बन्धी के घर जा कर अतिथि बनतीं, अन्त में अपने पिता के घर जा कर किसी तरह दिन काटती रहीं, प्रताप के मामा के घर की हालत भी विशेष अच्छी न थी। विधाता जब किसी के प्रति निर्दय होते हैं तब उन की निष्ठुरता के निकट ससार की सब निष्ठुरता फीकी पड जाती है। और वे जिन को वीर बना कर उठाते हैं, उन के वीरत्व के निकट भगवान की निष्ठुरता भी हार मानने को बाध्य होती है। इसी से इतनी विपत्ति मे पडकर भी प्रतापसिंह बराबर विप्लव दल में काम करते रहे। काम करने के भी जुदा जुदा विभाग हैं, केवल कर्त्तव्य ज्ञान से काम करना एक बात है, और काम कर के आनन्द पाना दूसरी बात, हमारा विचार है कि काम करके आनन्द पाया जाय यही हमारा कर्त्तव्य है, अर्थात् जैसा काम कर के मन में किसी तरह का अनुताप परिताप न हो, जैसा काम करने से मन में और प्राण में ग्लानि की कोई सूचना भी न हो, और सब से बढ कर जैसा काम करने से मनुष्य साक्षात रूप से आनन्द भी पाये, हमारा विचार है वैसा काम ही मनुष्य का कर्त्तव्य है, और जो केवल शुष्क कर्त्तव्य बुद्धि से प्रेरित होकर किया जाता है, जो करके मनुष्य आनन्द तो पाये ही नहीं, प्रत्युत उस से क्लेश का आभास हो वह काम करना मनुष्य को उचित नहीं। वैसे स्थान में मानना होगा कि अनधिकार चर्चा की जा रही है,

चतुराई के साथ बार बार समझाती थीं। पुलिस की ये सब बातें बिलकुल निर्मूल हों सो भी तो न था।

पहले पहल तो वे पुलिस के साथ ज्यादा देर ठीक तरह बात ही न करते थे। पीछे उन लोगों के साथ बात करना प्रताप को मानो कुछ कुछ भला लगने लगा। एक दिन पुलिस वालों के साथ प्रताप की करीब तीन चार घंटे बातचीत हुई। हम सब पास की निर्जन कोठरी में बैठे बैठे दम थाम कर जमीन आसमान की बातें सोचने लगे, सन्देह हुआ अब की बार प्रताप फूट पड़ेगा। पीछे मुकद्दमा आरम्भ होने पर जब हम सब को प्राय सारा दिन इकट्ठा रहने का सुयोग मिला तब जान पाया कि सच ही प्रताप का मन बहुत विचलित हो गया था। यहां तक कि अन्त में एक दिन प्रताप ने पुलिस से कह दिया कि वे एक दिन और सब बात सोच देखें, फिर कहना होगा तो कह देंगे। किन्तु अगले दिन जब पुलिस प्रताप से मिलने आई, प्रताप बोले, "देखिये बहुत सोच देखा, अन्त में तय किया है कि कोई बात नहीं खोलूंगा, अभी तक तो केवल मेरी ही माता कष्ट पा रही हैं, किन्तु यदि मैं सब गुप्त बातें प्रकट कर दूं तो और भी कितने लोगों की मातायें ठीक मेरी माता के समान कष्ट पायेंगीं, एक मा के बदले में और कितनी माताओं को तब हाहाकार करना होगा।"—मन के एक बार नीचे फिसल पड़ने पर उसे फिर अपनी जगह लौटा लाना कितना कठिन कार्य है सो चिन्ताशील व्यक्ति ही समझ सकते हैं।

गरम" हो गया था। जिन्हें भारत में पग पग पर लाञ्छन और अपमान ही सहना होता था उन्हें जब तुर्की में राजा के अतिथि रूप में राजसन्मान के साथ समग्र तुर्की में भ्रमण करने का सुयोग मिला तब उन का "माथा गरम" होना ही चाहिए था। भारत की आबहवा में रह कर इतने दिन तक मुसलमान समाज में किसी चेतना के लक्षण दिखाई नहीं दिये, किन्तु जब इसी मुसलमान दल के लोग तुर्की की स्वाधीन आबहवा के स्पर्श में आये, और जब उन्हों ने देखा कि आज भी उन के स्वधर्मी लोगों ने युरोप वालों के देश में भी अपना आधिपत्य बराबर बना रक्खा है, और ऐसे एक स्वाधीन स्वधर्मावलम्बी राज्य के बाल वृद्ध वनिता तक प्रत्येक व्यक्ति ने जब भारतीय मुसलमान दल को आदर के साथ अपनाया, तब उन की कितने ही समय की मोहनिद्रा मानो पल भर में उड़ गई सहसा भारतीय मुसलमानों ने मानो अपने को पहचान लिया। तुर्की-इटैलियन युद्ध के फलस्वरूप भारतीय मुसलमान समाज में साधारण रूप से एक जागृति के लक्षण दिखाई दिये थे। काशी में देखा, धुने जुलाहे और गाड़ीवान तक रोज तुर्की का सवाद जानने के लिए व्यस्त रहते थे। स्वधर्मी लोगों की सहवेदना किसी मुसलमान को कष्ट के साथ अर्जन नहीं करनी पड़ती, यह तो उनका जन्मगत सँस्कार होता है। इस साधारण जागृति के सिवाय, तुर्की में मेडिकल मिशन भेजने के बाद भारत के मुसलमानों में विप्लव का भी कार्य आरम्भ हो

(२) मुसलमान विप्लव-दल की कहानी

पहले ही कह चुके हैं कि पजाब का विप्लवायोजन ... हो जाने के बाद मुसलमान विप्लव सघ के साथ हमारे दल का पहले पहल परिचय हुआ। इस बार दिल्ली मे रहते समय इस विप्लव दल के साथ हमें और भी घनिष्ट परिचय करने का अवकाश मिला।

इस मुसलमान विप्लव-दल के विषय में हमारे ... एक दम कुछ भी नहीं जानते, कारण, कि इन का ... प्रकट रूप मे कुछ भी दिखाई नहीं दिया। गत तुर्की-इटैलियन युद्ध के समय से ही भारत में इस विप्लव दल का सूत्रपात ... है। उसी युद्ध के समय, शायद १९११ ई० मे, भारत के मुसलमान युद्ध में घायलों को सेवा-शुश्रूषा करने के लिए तुर्की मे एक दल (Medical Mission) भेजते हैं। उस दल मे अधिकतर मुसलमान लोग ही थे। पजाब के "जमींदार" पत्र के सम्पादक श्रीयुत जफर अलीखा भी उस दल मे थे।

इस दल ने तुर्की के सुलतान और अन्यान्य स्वदेश प्रेमी मुसलमान सेनापतियों और राजकर्मचारियों के निकट विशेष सन्मान और आदर पाया। मेरे एक मुसलमान बन्धु मुझ से कहते थे कि इसी आदर की अधिकता से इन का "माथा

गरम" हो गया था। जिन्हे भारत में पग पग पर लाञ्छन और अपमान ही सहना होता था उन्हे जब तुर्की में राजा के अतिथि रूप मे राजसम्मान के साथ समग्र तुर्की में भ्रमण करने का सुयोग मिला तव उन का "माथा गरम" होना ही चाहिए था। भारत की आबहवा में रह कर इतने दिन तक मुसलमान समाज मे किसी चेतना के लक्षण दिखाई नहीं दिये, किन्तु जब इसी मुसलमान दल के लोग तुर्की की स्वाधीन आबहवा के स्पर्श में आये, और जब उन्हों ने देखा कि आज भी उन के स्वधर्मी लोगों ने युरोप वालों के देश में भी अपना आधिपत्य बराबर बना रक्खा है, और ऐसे एक स्वाधीन स्वधर्मावलम्बी राज्य के बाल वृद्ध वनिता तक प्रत्येक व्यक्ति ने जब भारतीय मुसलमान दल को आदर के साथ अपनाया, तब उन की कितने ही समय की मोहनिद्रा मानो पल भर में उड गई, सहसा भारतीय मुसलमानो ने मानो अपने को पहचान लिया। तुर्की-इटैलियन युद्ध के फलस्वरूप भारतीय मुसलमान-समाज में साधारण रूप से एक जागृति के लक्षण दिखाई दिये थे। काशी में देखा, धुने जुलाहे और गाड़ीवान तक रोज तुर्की का सवाद जानने के लिए व्यस्त रहते थे। स्वधर्मी लोगों की सहवेदना किसी मुसलमान को कष्ट के साथ अर्जन नहीं करनी पडती, यह तो उनका जन्मगत सँस्कार होता है। इस साधारण जागृति के सिवाय, तुर्की मे मेडिकल मिशन भेजने के बाद भारत के मुसलमानो मे विप्लव का भी कार्य आरम्भ हो

अवस्था ऐसी हो गई कि लछमी अब लोक-संग्रह की वैसी चेष्टा न करते और आधी इच्छा से जिन सब लोगों का उन्हो ने सग्रह किया था वे भी वैसे उत्साही न होते। किन्तु इस समय लछमीनारायण के मन मे एक और भाव क्रमश बढने लगा। दिल्ली के निष्कलङ्कियो के साथ घनिष्टता होने के कारण उन में यह परिवर्त्तन हुआ। उन के मत में कोई परिवर्त्तन न होने पर भी क्रमश. वे कार्य में निश्चेष्ट होते जाते, और अधिकांश समय भगवान् का नाम जपने और उन की आराधना में ही गँवा देते। इस तरह धीरे धीरे वे हमारे काम की अवहेलना करने लगे। वे स्वय जिस प्रकार निष्कलङ्कियो के प्रति अगाध विश्वास रखते थे उसी प्रकार जिन कुछ एक कार्यकर्त्ताओं का उन्हों ने सग्रह किया था उन्हें भी इसी निष्कलङ्को दल के विश्वासू भक्त बना डालने लगे। फलत' हमारे कार्य में उन का वैसा उत्साह न रहा। अन्त में हम ने सुना कि लछमीनारायण खाली प्रार्थना करने के सिवाय हाथ से या कलम से और कुछ भी न करेंगे, और उन के अनुयायी भी उन्हीं के मार्ग का अनुसरण करेंगे।

इन सब कारणो से अनेक प्रकार से विप्लव की चेष्टा विफल होने के बाद मैं और प्रतापसिंह नये सिरे से कार्य चलाने के लिए दिल्ली आये। हमारे दिल्ली आने का यह भी एक कारण था। क्राडक साहब के दिल्ली में न रहने से हमें अपना एक विशेष कार्य अन्त में स्थगित ही रखना पडा, किन्तु दिल्ली की विप्लव-समिति के पुनर्गठन मे हम पूर्ण उद्यम से लग गये।

दिल्ली में हमारे लिए मकान किराये कर देना, दिल्ली के पुराने कार्यकर्त्ताओं के साथ आलाप-परिचय करा देना आदि साधारण कार्यों को छोड़ लक्ष्मीनारायण और कुछ न करते थे। अर्थात् दिल्ली का सब कार्य भार हमारे हाथों सौंप दे कर उन्हों ने विप्लव के कार्य से छुट्टी पाने का प्रबन्ध कर लिया।

हम लोग दिल्ली में एक मकान भाड़े ले कर प्राय पन्द्रह दिन रहे। दिल्ली से राजपूताना बहुत दूर नहीं है, मैं दिल्ली में ही रहा और प्रताप को दो बार जयपुर भेजा। हमारी इच्छा थी राजपूताना के कुछ एक युवकों को दिल्ली में ला कर दिल्ली के विप्लव केन्द्र को सुगठित कर डालें। प्रताप राजपूताना में कार्य करते और मैं दिल्ली के कर्मियों के साथ मिलता जुलता और उन में से अपने दिल के मुताबिक आदमी छाटता। इस प्रकार दिल्ली में कुछ एक दिन काम करने के फलस्वरूप खास्ता जी के मन में बुझी हुई आग फिर प्रज्वलित हो उठी। उन्हों ने अपना पुराना उद्यम फिर पा लिया। हम ने देखा लक्ष्मी नारायण के बदले खास्ता जी ही दिल्ली का कार्य भार ग्रहण कर सकेंगे। उन्हीं की चेष्टा से इस बार हमारे साथ दिल्ली के मुसलमान विप्लवदल का घनिष्ट परिचय हुआ। मुसलमानों के साथ ठीक हुआ कि वे हमें पिस्तौल, रिवाल्वर और गोली जुटा देंगे और हम उन्हें बम जुटा देंगे। इस के सिवाय जिस प्रकार हम दोनों दल शीघ्र ही और भी अधिक सम्मिलित रूप से कार्य कर सकें उस का भी विस्तृत आयोजन किया उन्हे

लगा। इतने दिन बाद मानो मालूम होने लगा, कि दिल्ली में फिर से कार्य का स्रोत बहने लग गया। हमारे पास से बम लेने के लिए हो, अथवा यथार्थ में सहायता करने के लिए हो, दिल्ली मे मुसलमान दल ने हमारी इस वार बडी आर्थिक सहायता की।

इस प्रकार जिस समय दिल्ली का कार्य क्रमश आगे बढ़ने लगा मैं भी ठीक उसी समय खूब बीमार पड गया। लाचार प्रताप को संग ले कर मैं बंगाल चला आया, मेरे नाम उस समय वारन्ट निकल आया था इस लिए युक्त प्रदेश मे न रह कर बगाल आना ही ठीक समझा।

विप्लव के कार्य में लक्ष्मीनारायण भले ही निश्चेष्ट हो गये, किन्तु दूसरी ओर प्राय हर समय उन्हे कल्कि और काली का नाम जपते देखा जाता। वे सचमुच बडे भक्त थे इस में कोई सन्देह नहीं, किन्तु इस प्रकार कर्म में निश्चेष्ट होना हमे अच्छा नहीं लगता। लक्ष्मीनारायण जी की कर्म में यह निश्चेष्टता उन्हें, निष्कलङ्कियो से ही मिली थी। लक्ष्मीनारायण और उनके कुछ एक वन्धुओं के सिवाय हम सब लोग निष्कलङ्कियों की बातों पर अविश्वास भी नहीं करते, और उन की सब बातों पर विश्वास भी नहीं करते। भगवान् का स्मरण और उन के श्री चरणों में आत्मोत्सर्ग कर के जीवन को भगवान् के भाव से पूर्ण कर डालने की आन्तरिक चेष्टा हम मे से बहुतो ने की, किन्तु निष्कलङ्कियों को बातों मे हमें खूब आनन्द भले ही

आता था उन की सन बातों मे हम पूर्ण रूप से आस्था नहीं कर सके।

एक बात हम सभी ने सुनी है कि धर्म धर्म करते करते हमारा देश एक दम उजड गया है। बडे ही दु ख के साथ एक बात स्वीकार करनी पड़ती है कि १०-१२ बरस के विप्लव-कार्य के तजर्बे में हम ने देखा है कि जो लोग धर्म धर्म बहुत पुकारा करते थे उन में १०० में से ९९ आदमी पीछे से लोकहित के कार्य में निरुत्साह हो जाते थे और अन्त में इने गिने दो एक आदमियों के सिवाय और सभी प्राय तामसिक वृत्ति के हो जाते थे। धर्म और आन्तरिकता की पूरी परख होती है त्याग मे, और इस त्याग की कसौटी पर कसे जाने पर अधिकांश धार्म्मिक कहलाने वाले लोग तामसिक और स्वार्थ परायण प्रमाणित हुए हैं। हमारा विश्वास है कि आर्य सभ्यता में दो बडे ऊचे सिद्धान्त हैं—अधिकारभेद और गुरुवाद, इन दोनों की ओर एकदम ध्यान न दे कर जब हम धर्म कर्म करते जाने को कहते हैं तब स्वधर्म छोड कर परधर्म करने लगते हैं, और इसी कारण हमारी दुर्गति होती है। इसी मे सात्त्विकता की ओट मे हम प्राय तामसिकता को आश्रय देते हैं, और धर्म के नाम पर केवल अधर्माचरण करने लगते हैं।

लछमीनारायण में सचमुच तेज था, उन्हों ने सचमुच आन्तरिक भाव से भगवान् का स्मरण करना आरम्भ किया था, किन्तु सासारिकता और आध्यात्मिकता के बीच वे

सामञ्जस्य नहीं रख सके। और लछमी की देखादेखी उन के बन्धुओं ने भी कर्म को त्याग कर केवल भक्ति को ग्रहण कर लिया था, किन्तु विपत्ति के दिन, हम सब के पकडे जाने पर इन्हीं लछमी के बन्धुओं ने जिन्हों ने इतने दिन तक भगवान् का नाम लेना ही जीवन का एक मात्र कर्त्तव्य बना रक्खा था, पुलिस के पजे में पड कर अपने को बचाने के लिए हम सब के विरुद्ध गवाही दी थी, और तो और लछमी नारायण के विरुद्ध गवाही देने से भी वे नहीं चूके।

विपत्ति में पडने से पहले तक लछमी जी उन के विषय में कहते थे कि इस समय वे लोग बिलकुल भक्ति-साधना में लिप्त हैं, इसी से उनके द्वारा मैं विप्लव का कोई काम काज कराना नहीं चाहता, इस के सिवाय इस समय भगवान् को स्मरण करना ही एकमात्र काम है, अपने हाथ से हमें कुछ करना नहीं है, श्री कल्कि भगवान् प्रकट होंगे, और पूर्णत उन्हीं का शरणागत होना इस समय हमारा प्रधान कर्त्तव्य है। लछमी नारायण जी बहुत दिनो से बहुत विपत्तियों के बीच विप्लव समिति में काम काज करते आते थे, इसी से दूसरे साथियों की अपेक्षा उन की मानसिक शक्ति बहुत अधिक थी, हमारा विचार है इसी कारण विपत्ति मे पड कर भी वे अपने को भूले नहीं, किन्तु उन के दिखाये कर्म्मविमुखता के आदर्श मे अनेक लोग उलटे रास्ते पड गये, इसी लिए असल परीक्षा के समय वे लोग मनुष्योचित व्यवहार न कर सके।

हम ने ठीक किया कि रासूदा को अब किसी प्रकार भारतवर्ष में नहीं रहने देना होगा। बहुत ही चुकी भगवान अनेक प्रकार से उन को अब तक बचाते आये हैं। अब और अधिक उन्हें भारतवर्ष में बेखटके रहना सहज नहीं है। हमारा दल चोट के बाद चोट खा कर फैलने का सुयोग नहीं पाता। जिस समय हमारा दल उन्नति की ओर अग्रसर होने लगता है, ठीक उसी समय एक ऐसी बड़ी चोट उस पर आ लगती है कि उस चोट के बाद सम्हलने में फिर कुछ दिन लग जाते हैं। पहले दिल्ली षड्यन्त्र मामले की चोट सम्हालते सम्हालते हमारा एक वर्ष चला गया, उस चोट के बाद सम्हल कर फिर जब गवर्न्मेंट पर और जोर की चोट करने लायक शक्ति सञ्चय किया ठीक उसी समय फिर लाहौर षड्यन्त्र का मामला हो गया। इस चोट ने हमें एक दम पङ्गु कर दिया। इस चोट से हमारा पञ्जाब और युक्त प्रदेश का दल भग्नप्राय हो गया। बङ्गाल में भी भिन्न भिन्न दलों को चोट के बाद चोट सहनी पड़ी। इस अवस्था में रासबिहारी को भारतवर्ष में रखना हमें कुछ भी युक्तिसगत न जान पड़ा, क्योंकि दल का अच्छा जोर न रहने पर अंग्रेजों की विधि व्यवस्था के विरुद्ध टिका रहना किसी प्रकार सम्भव न था। [illegible]ा जो हम लोग इतने दिन तक बचाये रख सके तो केवल [illegible]र्गनिजेशन (सगठन) के सुप्रबन्ध के जोर पर। दिल्ली [illegible] के बाद रासूदा को पकड़ा देने के लिए साढे [illegible] की घोषणा की गई थी, उस के एक वर्ष

चौथा परिच्छेद

बंगाल में

(१) रासबिहारी का भारत त्याग

बारी का बुखार ले कर प्रताप के साथ बङ्गाल मे अपने केन्द्र मे आ उपस्थित हुआ। बगाल में हमारी विप्लव-समिति का केन्द्र था कलकत्ता के निकट एक गाव। अनेक कारणों से उस गांव का नाम अब भी नहीं लिखा जा सकता। इसी स्थान में मुझे पन्द्रह दिन तक खाट पर पडे रहना पडा। और इसी स्थान के युवकों ने उस समय बडे यत्न से मेरी सेवा शुश्रूषा की। प्रताप मुझे बगाल में छोड कर राजपूताना चले गये। बात थी कि मैं स्वस्थ होने पर राजपूताना जाऊगा और इस बार बडे यत्न के साथ राजपूताना मे विप्लव के केन्द्र स्थापित करने होंगे। परन्तु जब उन के साथ मेरी फिर भेंट हुई, तब हम दोनों ही जेल मे थे।

मैं जब इस प्रकार बीमार हो कर खाट पर पडा था तब पूर्व बगाल के एक नेता श्रीयुत नगेन्द्रनाथ दत्त उर्फ गिरिजा बाबू प्राय मेरे पास आया करते थे। उन के साथ परामर्श कर के

रे अनुरोध को वे अन्त तक न टाल सके। किस प्रकार, कब
र कहां जाना होगा ये सब बातें रासूदा से भेंट होने के बाद
क की गई। बात थी कि रासूदा विदेश जाते ही सब से
ले यथेष्ट परिमाण में मोजर पिस्तौलें और उन की गोलियां
त देंगे, और बाद मे विप्लव के लिए उपयुक्त परिमाण में अस्त्र
स्त्र भेजने का बन्दोबस्त कर चुकते ही देश चले आयेंगे। किस
ार अस्त्र शस्त्र देश में आ कर पहुचेंगे और विप्लव आरम्भ
रने की विस्तृत आयोजना कैसी होनी चाहिए, यह सब
देश के उपयुक्त और जानकार समरकुशल व्यक्तियों के साथ
ामर्श कर के ठीक करने का विचार था।

काशी से रासूदा विनायक कापले को संग ले कर पहले
दिया आये, और फिर विदेश जाने के पहले तक कलकत्ता के
स ही कहीं रहे। विदेश जाने के चार एक दिन पहले वे
लकत्ते की ही एक कलकलपूर्ण बस्ती में आ रहे और एक दिन,
न दोपहर में और गिरिजा बाबू जा कर उन्हें जहाज पर चढा
ये। यह अप्रैल सन् १९१५ की बात है। मैं और रासूदा एक
ाड़ी मे और गिरिजा बाबू दूसरी गाड़ी में जहाज तक गये।
ासूदा का मुझ से बडा ही प्यार था। रास्ते मे रासूदा मुझे
पने अत्यन्त निकट खींच कर मेरे कन्धे पर हाथ रख के बडे
नेह के साथ कहने लगे, "भाई देश छोड़ते मुझे कितना कष्ट
ोता है सो तुम्हें नहीं कह ... ब सावधान हो कर
ुनो भाई, देश के काम को ... तुम भी मेरे

बाद लाहौर षड्यन्त्र के मामले में रासबिहारी का कीर्ति कलाप प्रकाशित हुआ। इस के फल स्वरूप पंजाब गवर्न्मेन्ट ने उन्हें पकड़ा देने के लिए और २५००) अढाई हजार रुपया देने की घोषणा की, अर्थात् उन्हें पकडा देने के लिए इस समय सब मिला कर दस हजार रुपया इनाम था, और बनारस षड्यन्त्र मामले के बाद युक्तप्रदेश की गवर्न्मेंट ने अढाई हजार इनाम और बढ़ा दिया। तब उन्हें पकडा देने का कुल पुरस्कार १२५००) साढ़े बारह हजार रुपये तक जा पहुचा। इन सब कारणों से हमने ठीक किया कि रासूदा को इस बार भारत के बाहर भेजना ही होगा।

इतने दिन तक हम लोग एक बात की ओर बड़े उदासीन थे। हम इतने दिन तक समझते थे कि विप्लव वस्तुत शुरू होने में काफी देर है, इसी से हम ने इतने दिन तक उचित परिमाण में विदेश से अस्त्र शस्त्र लाने का कोई विशेष आयोजन नहीं किया था। किन्तु इस बार देश की अवस्था देख कर हम ने समझ लिया कि उपयुक्त परिमाण मे अस्त्र शस्त्र रहें तो विप्लव आरम्भ करने मे अधिक देर न होगी। इसी से इस बार रासूदा को विदेश भेज कर नये सिरे से विप्लव का आयोजन करना तय हुआ। रासूदा भी देश छोड़ने से पहले कह गये थे "इस बार, भारत के प्रत्येक युवक और युवती को सशस्त्र करना होगा, उस के बाद देखेंगे अंग्रेज किस तरह भारत पर शासन करते हैं।"

रासूदा पहले विदेश जाने के प्रस्ताव से वैसे सम्मत न होते थे, वे कुछ दिन और प्रतीक्षा करना चाहते थे, किन्तु

के सिवाय और किसी चीज की आवश्यकता न थी। जिस समय रासविहारी विदेश गये उस समय युरोप की लड़ाई भयंकर रूप से चल रही थी, और उस समय विदेश जाना या विदेश से देश में आना कुछ कम कठिन बात न थी। इस के सिवाय रासविहारी की सी दशा के आदमी के लिए एक जगह से दूसरी जगह घूमते फिरना कुछ कम खतरनाक न था। अवश्य ही उस समय उन के पास हर वक्त गोली भरी पिस्तौल रहती थी और हम में से भी कोई न कोई हर वक्त उन के नजदीक मौजूद रहता था। इसी से उन्हें जीते जी पकड लेना एक हिम्मत का ही काम था। किन्तु सब से अधिक वे भगवान् के अनुग्रह पर ही निर्भर रहते थे। जब वे अन्तिम बार कलकत्ते आये तब उन्होंने रिवाल्वर संग लेने में भी अनिच्छा प्रकट की थी। रासविहारी का बदन दोहरा था, इसी से मेरी धारणा थी कि वे दौड़ बिलकुल नहीं सकते। एक दिन मैंने उन से पूछा "यदि पुलिस पकडने आवे तो आप दौडने की चेष्टा करेंगे कि नहीं?" उस के उत्तर में हँसते हँसते बोले कि वे बिलकुल दौड न सकेंगे, उस अवस्था में शान्ति से आत्म-समर्पण कर देंगे। ऐसे ही और एक प्रश्न के उत्तर में उन्हों ने कहा था कि उन की आयु जब तक पूरी न होगी वे पकड़े न जायेंगे। आयु के ऊपर तो और किसी का हाथ नहीं है।

रासविहारी अब जापान में हैं। वहां वे जापानियों को अंग्रेजी पढ़ाते हैं, एशियन रिव्यू मासिक पत्रिका की सम्पादकी

पास चले आना।" उन के साथ मेरी यही अन्तिम बात थी।

इस प्रकार तय था कि देश में आर्गनिजेशन (सगठन) का डौल वँध जाने पर मैं भी विदेश जा कर उन का साथ दूंगा, कारण कि मेरे नाम भी वारन्ट निकल गया था और देश में रहने से उस समय पकडे जाने की बडी सम्भावना थी। वारन्ट निकलना तो दूर की बात है, यदि केवल पुलिस की सन्देह दृष्टि में पड जाय तो भी काम करने में वडी असुविधा हो जाती है। देश में भिन्न भिन्न स्थानों के विप्लवकारियों को परस्पर मिला देने वाला कोई और रहता तो मै भी रासूदा के साथ ही विदेश चला जाता, किन्तु वैसे किसी और व्यक्ति के न रहने से कार्य की खातिर उस विपत्ति के बीच भी मुझे देश में ही रहना पडा। काशी छोडने से पहले रासूदा ने मेरी माता जी से यह प्रतिज्ञा ले ली थी कि मेरे विदेश जाने के खर्च की वाबत एक हजार रुपया दे देंगी। मैं ऐसे विप्लव कार्य में लिप्त हू सो बात मेरी माता जी बहुत दिन से जानती थीं, और इन सब बातों में उन का यथेष्ट सहानुभूति भी थी। मेरे बहुत जन्मों के सुकर्मों का फल था कि बगाली के घर मे मुझे ऐसी मा मिली थी।

रासूदा के विदेश जाने का रहस्यपूर्ण विस्तृत इतिहास लिखने का समय अभी नहीं आया; केवल इतना ही यहा कहे देता हू कि बाहर से यह काम कितना ही रहस्यपूर्ण क्यों न दीखे, असल में यह बडा सहज और सरल था। इस प्रकार जाने के लिए केवल साहस और भगवान् का भरोसा करने

restless Of course I consoled myself with the fact that by passing through the agony of fire .. have come out a better and purer soul But I did not like the tone of pessimism that pervaded some parts of .. letter There is eternal life, so work is eternal You need not be anxious about impurity even if there is any Of course there is no necessity of secret work, and I quite agree with you Hitherto our knowledge of international situation was very meagre We mostly confined our attention to India But now I have come to understand a bit of international politics This has greatly altered my former ideas Please remember hat we shall have to—rather we are destined to—ackle the problem of the world It is India's miss on to usher in a new era of real peace and happiness in the world India's freedom is but a means o this end, and it is not an end in itself

(2)

Tokyo, 9th July, 22

My dearest

Your letter . reached me yesterday What

करते हैं, जापान के विभिन्न स्थानों में भारतवर्ष के विषय में वक्तृता आदि देते हैं, और भिन्न भिन्न सामयिक पत्रिकाओं आदि में लेख लिखते हैं। जापान में बहुत पहले ही वे अंग्रेजों के हाथ कैदी हो जाते, किन्तु जापान के एक ऊँचे दर्जे के अफसर के विशेष यत्न और चेष्टा से वे उस आफत से छुटकारा पा सके। अब उन्हों ने एक उच्च कुल की जापानी महिला का पाणिग्रहण किया है। और उन्हे एक पुत्र और एक कन्या रत्न प्राप्त हुआ है। पुत्र का नाम है भारतचन्द्र। हमारी भावज सम्भवत, इतने दिन में बगला सीख चुकी हैं। रासबिहारी अब जापान सरकार की प्रजा हैं।

जापान से रासबिहारी ने अब जो सब लेख यग इण्डिया और अन्य पत्रिकाओं आदि में भेजे हैं उन्हें बहुत लोग शायद जानते हैं। उन से उन का वर्त्तमान मत बहुत कुछ जाना जा सकता है। इस के सिवाय अपने कई बन्धुओं को भी उन्हों ने अब पत्र लिखे हैं, यहा उन का कुछ अंश उद्धृत कर दूगा, उसी से उन के वर्त्तमान मतामत का कुछ पता लग सकेगा।

(1)

Tokyo, Japan
12-4-22

My dearest ...

. .. The idea that I could not protect . all from the inhuman they were subjected to, makes me

events in India I have got many Japanese friends, from the cabinet ministers down to lawyers, M Ps, journalists and students Many books in Japanese about Gandhi and India movement have been published, and the papers and magazines are regularly carrying articles on India This month a Professor in the Tokyo Imperial University, published a voluminous book in Japanese on India. Next month I am engaged to deliver lectures on Indian Situation for three days To day most of the young men here are staunch advocates of Asian Independence Even older men and responsible officials are in sympathy with the new awakening noticed from Persia to China The most remarkable natinal trait (here) is patriotism And the people are ready to revere and love those who have the same characteristics This is the reason that we are given protection But for Japanese sympathy and love, I would have been dead long ago About going back to India well brother, I do not want to return till India is free Your *Bowdidi* is learning Bengali

did you wish me to write? And what was your heart's desire? I think I was sufficiently clear in my letter Of course there are many things which I cannot write in letters for obvious reasons and your curiosity about them must remain unsatisfied till we meet again The most noteworthy thing however is that my whole outlook has been broadened and I gave you a hint in this connection in my last letter Independence India must have Because her independence is essential for the regeneration of the whole world It is not the end in itself but it is a means to an end and that end is the destruction of Imperialism and Militarism and the creation of a better world for all to live in It is India's mission and therefore your and my mission . I like Japan and I have come to adore her, because I am convinced that she will stand for Asian Independence when time comes When I came here first, the Japanese had little knowledge of the state of affairs in India It is chiefly through our efforts and sacrifices that to-day every Japanese is closely following the trend of

(२)

टोकियो, ९ जुलाई १९२२।

प्राणों के तुम्हारी चिट्ठी कल मिली। लिखते हो मेरे पत्र से तुम्हारी आशा पूरी नहीं हुई। तुम्हारे हृदय की इच्छा क्या थी? मुझे तो प्रतीत होता है अपने पत्र में मैं ने सब बात स्पष्ट कर के लिखी थी। अवश्य ही ऐसी अनेक बातें हैं जो पत्र में नहीं लिखी जा सकतीं। जब तक फिर हमारी भेंट नहीं होती तब तक तुम्हारी उन के विषय मे उत्सुकता तृप्त नहीं हो सकती। तो भी सब से बढ कर जानने लायक बात यही है कि मेरी दृष्टि पहले से बहुत विस्तृत हो गई है, इस बात का मैंने पिछले पत्र में भी सङ्केत किया था। पूर्ण स्वाधीनता भारत को चाहिए ही, क्यों कि उसकी स्वाधीनता पर सारे ससार का पुनरुद्धार निर्भर है। यह स्वय एक साध्य नहीं, प्रत्युत एक उद्देश्य का साधन है, और वह उद्देश्य है साम्राज्य-सत्ता और सैनिक आधिपत्य का सहार, और सब लोगों के रहने को एक नये अच्छे ससार की सृष्टि। यही भारत का उद्देश्य है, और इसी लिए तुम्हारा और मेरा उद्देश्य है, मैं जापान को बहुत चाहता हू और उस पर श्रद्धा करने लगा हू, मुझे दृढ विश्वास हो गया है कि उपयुक्त समय आने पर जापान एशिया की स्वाधीनता के लिए सिर उठायगा। जब मैं पहले यहा आया जापानियों को भारत की अवस्था का कुछ ज्ञान न था। किन्तु अब मुख्यत हमारी चेष्टा और त्याग के कारण प्रत्येक जापानी भारत के ——

इसका भावार्थ यह है —

(१)

टोकियो, जापान

१२-४-२२

प्राणों के . , उन्हे मैं अमानुषिक निर्यातनों से बचा नहीं सका यह धारणा मुझे अत्यन्त अधीर किये रखती थी। जो हो मैं यही कह कर अपने को सान्त्वना देता था कि इस प्रकार आग मे तप कर वे और भी निर्मल और उज्ज्वल हो उठेंगे। किन्तु भाई, तुम्हारे पत्र में जगह जगह जो निराशासूचक बातें थीं वे मुझे बिलकुल अच्छी नहीं लगीं। हमारा जीवन अनन्त है, इसी से हमारा कार्य भी अनन्त है। यदि सचमुच तुम्हारे अन्दर कोई मलिनता हो भी तो चिन्ता की कोई बात नहीं . अवश्य ही अब गुप्त कार्य करने की कोई आवश्यकता नहीं है, इस विषय में तुम्हारे साथ मेरी पूरी सहमति है। अब तक हमें अन्तर्राष्ट्रीय अवस्थाओं के विषय में कुछ भी ज्ञान न था। हम ने अब तक भारत की ओर ही ध्यान रक्खा था। किन्तु अब अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में कुछ कुछ समझने लगा हू। इस से मेरे पहले विचारों में बहुत परिवर्तन हो गया है। एक बात याद रक्खो, —हमें अन्त में सारे ससार का प्रश्न हल करना होगा, हमारे भाग्य में यही लिखा है। ससार में नवीन युग ला कर सत्य और शान्ति की स्थापना का दायित्व भारत के ही सिर पर है। भारत की स्वाधीनता इसी उद्देश्य का साधन है, यहँ स्वयं उद्देश्य नहीं है।

(२)

टोकियो, ९ जुलाई १९२२।

प्राणों के तुम्हारी चिट्ठी कल मिली। लिखते हो मेरे पत्र से तुम्हारी आशा पूरी नहीं हुई। तुम्हारे हृदय की इच्छा क्या थी? मुझे तो प्रतीत होता है अपने पत्र में मैं ने सब बात स्पष्ट कर के लिखी थी। अवश्य ही ऐसी अनेक बातें हैं जो पत्र में नहीं लिखी जा सकतीं। जब तक फिर हमारी भेंट नहीं होती तब तक तुम्हारी उन के विषय में उत्सुकता तृप्त नहीं हो सकती। तो भी सब से बढ कर जानने लायक बात यही है कि मेरी दृष्टि पहले से बहुत विस्तृत हो गई है, इस बात का मैंने पिछले पत्र में भी सङ्केत किया था। पूर्ण स्वाधीनता भारत को चाहिए ही, क्यों कि उसकी स्वाधीनता पर सारे ससार का पुनरुद्धार निर्भर है। यह स्वय एक साध्य नहीं, प्रत्युत एक उद्देश्य का साधन है, और वह उद्देश्य है साम्राज्य-सत्ता और सैनिक आधिपत्य का सहार, और सब लोगों के रहने को एक नये अच्छे ससार की सृष्टि। यही भारत का उद्देश्य है, और इसी लिए तुम्हारा और मेरा उद्देश्य है, मैं जापान को बहुत चाहता हू और उस पर श्रद्धा करने लगा हू, मुझे दृढ विश्वास हो गया है कि उपयुक्त समय आने पर जापान एशिया की स्वाधीनता के लिए सिर उठायगा। जब मैं पहले यहा आया जापानियों को भारत की अवस्था का कुछ ज्ञान न था। किन्तु अब मुख्यत हमारी चेष्टा और त्याग के कारण प्रत्येक जापानी भारत के घटना-

प्रवाह को उत्सुकता से देख रहा है। मन्त्रिमण्डल के सदस्यों से लेकर वकीलों, पार्लमेंट के मेम्बरों, पत्र सम्पादकों और विद्यार्थियों तक मेरे बहुत से जापानी मित्र हैं। जापानी भाषा में गान्धी और भारतीय आन्दोलन के विषय में बहुत सी पुस्तकें प्रकाशित हुई है, और पत्रों-पत्रिकाओं में भारत पर लगातार लेख निकल रहे हैं। इसी महीने टोकियो इम्पीरियल विद्यापीठ के एक प्रोफेसर ने जापानी में भारत-विषयक एक विराट् ग्रन्थ लिखा है। अगले महीने मुझे भारत के विषय में तीन दिन व्याख्यान देने होंगे। आज यहां के बहुत से नवयुवक एशिया की स्वाधीनता के कट्टर पक्षपाती हो गये हैं। बूढ़े लोग और जिम्मेवार अफसर भी फारिस से चीन तक दीखने वाली नई जागृति से सहानुभूति रखते हैं। देशभक्ति तो जापानियों की जातीय विशेषता ही है। और ये लोग जिस में भी वह गुण देखते है उन्हीं पर प्रेम और श्रद्धा करने लगते हैं। यही कारण है कि हमें शरण मिलती है। जापानियों की सहानुभूति और प्रेम न मिलता तो मैं बहुत पहले मर चुका होता। भाई देश में वापिस आने के विषय में मुझे यही कहना है कि जब तक भारत स्वाधीन न हो मैं वापिस आना नहीं चाहता। --तुम्हारी बौदीदी (भावज) बंगला सीख रही हैं।

इन पत्रों से रासबिहारी के मन की वर्त्तमान अवस्था के विषय में बहुत कुछ जाना जा सकता है। किन्तु वर्त्तमान अवस्था की बात छोड़ कर जिस समय की अवस्था लिख रहा था, उसी समय की बात फिर लिखता हू।

(२) केन्द्र की कहानी

रासूदा भारत छोड़ चले गये, उन्हें जहाज पर चढा कर मैं और गिरिजा बाबू अपने केन्द्र में वापिस आ गये। केन्द्र के साथ हमारा सम्बन्ध खूब घनिष्ठ नहीं था, और ऐसा होने के अनेक कारण थे।

प्रथमत केन्द्र के नेताओं के साथ हमारे राजनैतिक मतो में मेल न था। वे इस विप्लव समिति की स्थापना के आरम्भ से ही टेररिज्म (त्रास फैलाने) के पक्षपाती थे। उन्हों ने अब तक देश मे सशस्त्र विप्लव करने के लिए कोई चेष्टा न की थी। वे समझते थे यदि कुछ दिन तक देश के एक छोर से दूसरे छोर तक अग्रेज गवर्न्मेंन्ट के ऊचे कर्मचारियों का रिवाल्वर और बम से काम तमाम कर दिया जाय तो गवर्न्मेंन्ट घवडा कर देश को अनेक राजनैतिक अधिकार दे देगी। और इस प्रकार तमचे के जोर मे अधिकार के बाद अधिकार प्राप्त करते हुए अन्त मे पूर्ण स्वायत्तशासन तक ले लेना सम्भव है, ऐसा उन लोगों के मन का विश्वास था। भारत के लिए पूर्ण स्वायत्तशासन ले लेने का ही अर्थ होता स्वाधीनता की प्रथम सीढी पर पहुच जाना, क्योंकि पूर्ण स्वायत्तशासन प्राप्त कर लेने पर भारत के लिए स्वाधीनता पाना कुछ कठिन बात न होती। वे यह भी कहते थे कि हम

प्रकार अथवा किसी और प्रकार स्वायत्त शासन पाये बिना भारत के लिए पूर्ण स्वाधीनता पाना सम्भव नहीं है। उन का विश्वास था, टैररिज्म (त्रास फैलाने) के द्वारा ही सहज में और थोड़े समय में पूर्ण स्वायत्तशासन पाया जा सकता है। यह कार्यप्रणाली उन्हे बगाल के किन्हीं स्वनामधन्य देशपूज्य नेता से प्राप्त हुई थी। किन्तु इस टैररिज्म को भी सार्थक करने के लिए दल का जैसा गठन करने की आवश्यकता थी वह भी वे न कर सके थे। जैसे किसी जगह के एक मैजिस्ट्रेट को मारना होता तो एक युवक को रिवाल्वर दे कर उस जगह भेज देते, यद्यपि पहले से उस जगह पर दल के गठन की कोई चेष्टा न हुई होती थी।

सुनियन्त्रित उपयुक्त और शक्तिशाली सघ के बिना आज कल कोई कार्य भी सफल नहीं हो सकता, और भारत के लिए स्वायत्त शासन पाने का अर्थ स्वाधीनता पाना ही है, ऐसे एक विराट् और कठिन कार्य को सफल करने के लिए कैसे विशाल और शक्तिशाली सघ की आवश्यकता थी हमारे केन्द्र के नेता लोग यह बात भली प्रकार नहीं समझ सके। इसी से इन की नायकता में बगाल मे कोई भी विशेष दल नहीं उठ खड़ा होता, इन के दल का क्षुद्र दायरा ग्राम की सीमा पार नहीं कर पाता। इस प्रकार कार्य करने से कृतार्थ न होने की ही सम्भावना थी, इसी से केवल इन के यत्न से, कहा जा सकता है, त्रास (Terrorism) की कोई चेष्टा सार्थक नहीं हुई। इस सब कार्य-प्रणाली के विषय मे इन के साथ मेरा प्राय घोर विवाद होता।

सिवाय अपनी कार्यप्रणाली के विषय में कोई भी बात इन के साथ फिर मत करना।

रासबिहारी बचपन से ही इन के संसर्ग में थे, पर इन की प्रकृति के साथ उन की प्रकृति का मेल न था। जरा बड़े हो कर जब वे देहरादून नौकरी करने गये तभी वे अपने कार्य की धारा की अपने आप ही सृष्टि करने लगे। प्रकृति देवी जैसे सब से अलक्षित ही अपने कार्य की सृष्टि कर डालती हैं, रासूदा भी वैसे ही अपने नेताओं से अज्ञात एक विशाल दल खड़ा कर डालते हैं, बेशक कार्य कुछ आगे बढ जाने के बाद केन्द्र के नेताओं को उन्हों ने बहुत कुछ बतला दिया था। रासबिहारी इन के समान केवल त्रास (Terrorism) के पक्षपाती न थे, इसी कारण उन की कार्य प्रणाली एक और ही किस्म की थी। किन्तु इन के साथ मत का मेल न रहने पर भी रासबिहारी विरोध और दलबन्दी के पक्षपाती न थे, इसी से इन के साथ जहा तक सम्भव होता मिल जुल कर ही काम करते थे।

एक और कारण से भी केन्द्र के नेताओं के साथ हमारा भारी विरोध होता था। ये नेता लोग समझते थे आध्यात्मिकता का गूढ मर्म्म केवल वही लोग प्राप्त कर सके थे, इसी से उन के साथ मतभेद होते ही वे कह देते कि हम लोग बिलकुल पाश्चात्य आदर्श में मतवाले हो गये हैं, मानो त्रास फैलाने (Terrorism) की अपेक्षा सामिल विप्लव की चेष्टा अधिक पाश्चात्य आदर्श से अनुप्राणित थी,—विरुद्ध पक्ष

मत का खण्डन करने की यह अकाट्य युक्ति आज कल बहुत लोगों की जबान पर सुनी जाती है।

ये लोग अनेक प्रकार से प्रचार करते थे कि वैराग्य-साधना अथवा ध्यान-धारणा और समाधि का मार्ग ही भगवान् को पाने का एकमात्र श्रेष्ठ मार्ग नहीं है। इसी से ये लोग प्रचार करते थे कि ससार को त्यागे बिना ससार के सब कार्यों को ठीक प्रकार करते हुए ससार में अनासक्त हो कर रहना ही श्रेष्ठ मार्ग है, किन्तु व्यवहार क्षेत्र में ये अपनी क्षुद्र टोली को राजनीति से प्रयत्न पूर्वक पृथक कर रखने की भरपूर चेष्टा करते थे। इसी से हमारे साथ इन का नित्य ही विरोध होता। जिस दिन पजाब का विप्लवायोजन विफल होने के बाद हम ने इस केन्द्र में आ कर जरा दम लेने के लिए आश्रय लिया उसी दिन इन लोगों ने चुटकी ले कर हम से कहा था "बहुत ...ाद हो चुकी, अब जरा शान्त हो कर बैठ कर भगवान् ... आराधना करो।"

हमारा विचार है कि इन की प्रकृति विप्लव धर्म की विरोधी ..., इसी से ये लोग अनेक घटनाचक्र में पड कर क्रमश इस ...व के चक्कर से बहुत दूर हटते गये। ये लोग मुह से ज्ञान, ... और वैराग्य के बीच समन्वय कर के चलने के आदर्श का ...र भले ही करते थे, किन्तु कार्यक्षेत्र में और सब प्रकार से ... के कार्य में लिप्त रह कर भी राजनीति से, विशेषतः ... राजनीति के आदर्श का अनुसरण करने से

सरकार के साथ विरोध होना जरूरी होता उस मार्ग से बड़े यत्न के साथ बच बच कर चलने की चेष्टा करते थे। नि सन्देह जब तक ये लोग दूसरे विप्लवियों के सस्पर्श में थे, तब तक सब तरह से भीषण विपत्ति की भी परवाह न करते हुए उन सब विप्लवियों की सहायता करते थे, किन्तु इन की प्रकृति दूसरी तरह की थी इसी से इन्हों ने प्राय इन सब विप्लविया का सग छोड दिया था। जिस प्रकार वैराग्य की प्रवृत्ति वाले महापुरुष पहले पहल ससार और भोग में लिप्त रहते हैं, किन्तु स्वधर्मवश धीरे धीरे उसी वैराग्य के मार्ग का अवलम्बन कर अन्त मे ससार त्याग देते हैं, उसी प्रकार हमारे ये नेता लोग पहले पहल विप्लव समिति के साथ अन्तरग रूप से लिप्त थे, पर स्वधर्मवश ये लोग सब प्रकार के विप्लव के अनुष्ठान से धीरे धीरे दूर सरक गये और अन्त में विप्लव के साथ सब सम्पर्क ही इन्हो ने त्याग दिया। किन्तु विप्लव कार्य मे योग देना जहा इन्होने ने छोड दिया वहा ससार को ही नहीं छोड दिया, इसी प्रकार राजनीति को ही छोडा पर और सब प्रकार से समाज की सेवा ये लोग करते रहे।

इन सब कारणों से इन के साथ हमारा मन न मिलता था। रासविहारी देश मे थे तब तक वे इन से दूर दूर रहने को बडा मान कर चलते थे. मालूम होता है इस का यह था कि रासविहारी बचपन मे ही इन्हीं की उठे थे, किन्तु क्रमश रासूदा के चरित्र मे भी

ऐसा परिवर्त्तन हो गया था कि भारत त्याग करने से जब वे इन के पास अन्तिम बार आये थे तब ये रासूदा व्यक्तिगत प्रभाव को देख कर कह उठे थे, "इसे किस छिपा रक्खें ? इसे जो देखेगा उसी की दृष्टि इस पर जायगी, इसे देख कर ही मानो मालूम होता है 'हां, मनुष्य—असल मनुष्य बैठा है।" जिस समय की यह उस समय इन के मकान की मरम्मत का काम चलता इसी लिए कुली मजदूर आदि नित्य मकान के भीतर आया करते थे। इन सब कुली-मजदूरों के जाने आने ख्याल कर के ही उन्हों ने यह बात कही थी। एक दिन रासूदा के गुरु के समान थे, किन्तु अन्त में शिष्य के मुग्ध हो गये थे। रासविहारी के विदेश चले जाने के से क्रमश हम लोग इन सब नेताओं से दूर हटते गये। समय बगाल में जो सब विप्लव दल थे उन में से ढाका विप्लव दल के साथ ही हम सब से अधिक घनिष्ठ रूप से जुल कर काम करते थे।

(३) ढाका अनुशीलन समिति की कहानी

बगाल में सभी विप्लवदलो की धारणा थी कि ढाका की अनुशीलनसमिति दूसरी विप्लवसमितियों के साथ मिल जुल कर काम करने को अनिच्छुक है अथवा बगाल की कोई भी विप्लवसमिति ढाका की अनुशीलनसमिति के साथ मिल जुल कर काम न कर सकेगी। किन्तु वे लोग यह न जानते थे के ढाका की समिति चन्दननगर अथवा रासविहारी के दल के साथ पूरी तरह मिल गई थी, और यह मिलना युरोपियन महायुद्ध से बहुत पहले हो हो गया था। मेरी जहा तक जानकारी है उस से इतना कह सकता हू कि सब दोष गुण मिला कर यह ढाका की अनुशीलनसमिति बगाल के अन्यान्य अनेक विप्लवसमितियों की अपेक्षा श्रेष्ठ थी। इन के समान बडा दल बगाल मे और किसी विप्लवसमिति का न था। पूर्व बगाल और उत्तर बगाल के प्राय प्रत्येक जिले में इन की शाखा प्रशाखा थी। यह तो सभी मानते हैं कि सख्या और विस्तार में बगाल के सब विप्लवदलों से ये बढे चढे थे। किन्तु पश्चिम बग के विप्लवदल के नेता पूर्व बग के दल को कम बुद्धिमान् समझते थे, इसी से पूर्व बङ्ग के दल को वे विश्वास की दृष्टि से न देखते थे। पश्चिम बग के विप्लवदल के युवक

लोग पूर्व बगाल के युवकों की अपेक्षा अपने को अधिक
सस्कृत और सुशिक्षित (Cultured) समझते थे। इसके
सिवाय ढाका की अनुशीलन-समिति को बंगाल के प्राय: सभी
विप्लवदल परिमाण में छोटा होने के कारण ईर्ष्या की दृष्टि से
देखते थे, इन्ही सब कारणों से चन्दननगर अथवा रासविहारी
के दल को छोड कर बगाल का और कोई दल भी ढाका के
अनुशीलन दल के साथ मिल कर एक अखण्ड दल खडा क
लेने को इच्छुक न था। मनुष्य का अहङ्कार बडी भयानक वस्तु
है। यह मनुष्य को ऊपर उठाने में जैसी सहायता करता है
वैसे ही उसे नीचे गिराने में भी त्रुटि नहीं करता। अहङ्कार
को सुसयत कर रखना बडा कठिन काम है, इसी से प्राय
सभी जगह इसी अहङ्कार से अनेक अनर्थों की सृष्टि हुई है।
बगाल मे भिन्न भिन्न विप्लवदल मिल कर एक विराट् दल
परिणत न हो सके इस का मुख्य कारण इन भिन्न भिन्न दलों
नेताओं की क्षुद्र अहङ्कार-बुद्धि ही थी। बगाल का कोई द
यदि दूसरे दलों के साथ मिल जुल कर एक होने की चेष्टा न
करता और अन्त में चेष्टा करने पर भी कृतकार्य नहीं हो सक
तो इसी अहकार के प्रभाव के कारण। इसी लिए बगाल
अनेक क्षुद्र विप्लव दलों का अस्तित्व था। ऐसा जान पडता
मानो बगाल में कर्म्मियों की अपेक्षा नेताओं की सख्या
अधिक है। बगाल में जो दस युवकों को भी एकत्रित कर पा
वही एक नेता ...

पर फिर वे अन्य किसी दल के साथ मिल जाना स्वीकार न करते, इस का प्रधान कारण यही था कि ये सब नेता कहलाने वाले सोचते थे कि इस प्रकार अन्यान्य दलों के साथ मिल जाने से उन की स्वतन्त्रता एकदम नष्ट हो जायगी। मेरा विचार है कि बगाल के भिन्न भिन्न क्षुद्र दलों के नेताओं के मन में ऐसा भाव था इसी कारण वे ढाका के दल के साथ मिलना स्वीकार न करते थे, वे सोचते थे किसी बडे दल के साथ मिल जाने से उन का क्षुद्रत्व प्रकट हो जायगा और उस बडे दल में शायद उन की प्रधानता कुछ भी न रहेगी। बहुत बार मैंने स्वय बगाल के कुछ एक विप्लवदलों को ढाका के दल के साथ मिलाने की चेष्टा की है, किन्तु किसी बार भी कृतकार्य नहीं हुआ। नि सन्देह ऐसा मिलाप न होने का एक और भी विशेष कारण था। बगाल के भिन्न भिन्न विप्लवदलों के बीच ऐसे कोई प्रतिभावान् शक्तिशाली पुरुष नहीं हुए जिन की व्यक्तिगत मोहनी शक्ति के बल से खिंच कर भिन्न भिन्न दल अन्त में एक दल में परिणत हो सकते। अवश्य ही वैसे किसी प्रभावशाली व्यक्ति के होने पर भी बंगाल के सब दल मिल कर एक हो जाते कि नहीं इस में भी सन्देह है।

चाहे जिस कारण से हो बङ्गाल के प्राय सभी विप्लवदल ढाका की समिति के प्रति असन्तुष्ट थे। शायद इस का एक कारण यह था कि पूर्व बगाल की अनुशीलनसमिति के प्राय सभी सदस्यों के मन में कुछ ऐसा गर्व का भाव था कि उन के

समान शक्तिशाली दल बगाल में और कोई नहीं है। जान पडता है इसी लिए पश्चिम बङ्ग के विप्लवदलों का पूर्व बगाल के दो एक छोटे छोटे विप्लवदलों के प्रति वैसा द्वेष न था जैसा इस ढाका समिति के प्रति था। ऐसा होने का एक और कारण भी था। ढाका समिति पुलिन बाबू द्वारा स्थापित हुई थी। और इन पुलिन बाबू की प्रकृति मे स्वेच्छाचारिता (autocracy) का भाव भयानक रूप से प्रबल था। पुलिन बाबू सचमुच और किसी के साथ मिल कर काम करने के पक्षपाती न थे। पुलिन बाबू का आधिपत्य जहा जरा भी कम हो वहा पुलिन बाबू का रहना असम्भव होता, इस अश मे पुलिन बाबू और बारीन बाबू एक ही प्रकृति के आदमी थे। इसी कारण पुलिन बाबू की विद्यमानता मे ढाका की समिति और किसी समिति के साथ मिल न सकी, और बहुत कुछ पुलिन बाबू के कारण ही उसी समय से बगाल के सभी दल ढाका समिति के प्रति असन्तुष्ट हो जाते हैं और समय बीतने पर वही असन्तोष की आग क्रमश बुरा रूप धारण कर लेती है। असल में मिल जुल कर काम करने के लिए जो समझौते की प्रवृत्ति (compromising attitude) होनी चाहिए, पुलिन बाबू में उस जिन्स का विशेष अभाव था। किन्तु पुलिन बाबू को जेल होने के बाद ढाका समिति में एकच्छत्र आधिपत्य और किसी का नहीं रहता। तभी से यह समिति बहुत कुछ गणतन्त्र के आदर्श पर गठित हो गई। बगाल के भिन्न भिन्न दल अपने नेताओं के नाम से ही परि-

चित थे, जैसे यतीन बाबू का दल, विपिन बाबू का दल इत्यादि।
किन्तु पूर्व बंगाल की इस ढाका समिति का कोई एक
निर्दिष्ट नेता न रहने से यह अन्त तक ढाका अनुशीलन समिति
के नाम से ही परिचित होती आई है। इस प्रकार सर्वांश मे
एक व्यक्ति के नेतृत्व मे न रहने से यह दल कुछ कम शक्ति-
शाली हो गया हो सो भी नहीं, कारण कि जितने आंधी तूफानों
में से इस ढाका समिति को गुजरना पडा है उतने किसी और
दल ने भी सहे हैं कि नहीं इस में सन्देह है। बार बार विषम
विपत्तियों मे पड कर भी फिर यह दल सिर उठा कर खडा हो
गया है। पूर्व बंग के युवकों की यही एक विशेषता है कि वे
एक बार जिसे ग्रहण कर लें उसे जीवन रहते तक चिपट कर
पकड़े रहते हैं। पश्चिम बङ्ग के लोग पूर्व बंगाल के चाहे जितने
दोष देखा करें, मुझे तो प्रतीत होता है कि पूर्व बंगाल के युवक
पश्चिम बंग के युवकों की अपेक्षा अधिक सरल और अधिक दृढ-
प्रतिज्ञ निकलते हैं। पश्चिम बंग के लोगों में आन्तरिकता कम
है, और स्वदेशी युग के इतिहास की आलोचना करने से देखा
जाता है कि पूर्व बंगाल सभी प्रकार के राष्ट्रीय कार्यों में पश्चिम-
बंगाल की अपेक्षा अधिक अग्रसर रहा है। पूर्व बंगाल के युवक
और सब बातों में अच्छे हैं, पर उन में यह एक बडा दोष है
कि वे अनेक बार बडे तिकडमी (intriguing) साबित होते
हैं और उन में मालूम होता है सङ्कीर्ण प्रादेशिकता का भाव भी
कुछ प्रबल है। खैर जो भी हो, पुलिन बाबू के बाद ढाका समिति

के जो नेता हुए, उन्हों ने बहुत कुछ समझ लिया था कि देश के भिन्न भिन्न विप्लव दल मिल जुल कर सम्पूर्ण रूप से एक न हो जायेंगे तो देश का मंगल नहीं है। इसी से वे देश के सभी दलों के साथ मिलने को इच्छुक थे, इसी लिए सम्भवत बरी साल षड्यन्त्र-मामले के समय ही ढाका समिति चन्दननगर दल के साथ मिल जाती है। काशी का दल भी इस ढाका समिति की मार्फत ही रासबिहारी के उत्तर भारत के दल के साथ परिचित हुआ। इस प्रकार हमारा दल पूर्व बंगाल से ले कर पंजाब तक फैल कर एक साथ काम करता रहा। पंजाब के विप्लवायोजन के संवाद भी अधिकांश स्थानों में इसी ढाका समिति की मार्फत ही बंगाल के भिन्न भिन्न विप्लव दलों के पास भेजे जाते थे। लाहौर, दिल्ली, काशी, चन्दननगर और ढाका के विप्लव दल इस प्रकार बिलकुल एक हो जाते हैं। किन्तु इस बात को बंगाल के अन्यान्य विप्लव दल उस समय घुणाक्षर न्याय से भी न जान सके थे।

जिस समय डिफेंस आफ इंडिया ऐक्ट (भारत रक्षा कानून) से कई हजार युवक केवल सन्देह के फेर में बिना विचार कैद हो गये, उस समय बंगाल के सभी दलों ने शक्तिहीन हो कर परस्पर मिल जुल कर एक साथ काम करने की इच्छा प्रकट की और कुछ दिन तक उस प्रकार कार्य चला भी। यह मिलाप यदि समय रहते ही हो जाता तो शायद फल और ही तरह का हो सकता। रासबिहारी भारत छोड़ने से पहले जब एक बार

कलकत्ते के निकट कहीं आये, उस समय उन्हों ने कलकत्ता अञ्चल के भिन्न भिन्न दलों के निकट मिल कर एक हो जाने का प्रस्ताव कर भेजा। किन्तु कलकत्ता अञ्चल के किसी भी दल ने इस मिलने के प्रस्ताव की कुछ परवाह नहीं की। विवश हो कर रासूदा को इस चेष्टा से हाथ खींचना पड़ा।

जो हो रासूदा की विदेश यात्रा के बाद भी हम इस पूर्व बंगाल के दल के साथ पहले की तरह ही मिल कर काम करने लगे। रासूदा की विदेश-यात्रा का खर्च, एक हज़ार रुपया, इसी ढाका समिति से ही लिया गया। जिस समय रासूदा को विदेश भेजा गया तब तक भी बंगाल के विप्लवदलों की शक्ति कुछ भी कम न हुई थी। प्रत्युत उस समय बंगाल के भिन्न भिन्न विप्लव दलों के बीच प्रतियोगिता चलती थी कि कौन दल कितना काम कर के दूसरे दलों को लज्जित कर सकता है। रासूदा को विदेश भेज कर हम ने समझा था विदेश से अस्त्र मंगाने की चेष्टा हमारे दल से ही सब से पहले हुई, किन्तु हम उस समय न जानते थे कि यतीन बाबू के दल ने भी ठीक इसी समय अपने आदमी विदेश भेजे थे। देश में चाहे हम भिन्न भिन्न दल इस प्रकार विच्छिन्न हो कर कार्य करते थे, किन्तु विदेश में उस समय सभी दल मालूम होता है, मिल गये थे।

इस समय की घटनाएं भली भांति मेरी जानी नहीं हैं, विशेष कर विदेश में किस प्रकार काम चलता था उस की अनेक बातें मैं नहीं जानता, क्योंकि रासूदा के विदेश जाने के

तीन मास बाद ही मैं पकडा गया। तो भी पूर्व वग के गिरिजा बाबू जब नवम्बर मास (सन् १९१५) मे पकडे जा कर काशी आये थे तब उन के नजदीक सुना था कि रासूदा ने कहीं संवाद भेजा है कि वे शीघ्र ही देश वापिस आने वाले हैं । उन के साथ बात थी कि विप्लव चलाने के लिए उपयुक्त अस्त्र शस्त्र यथेष्ट परिमाण मे पहुंचाने का पूरा बन्दोबस्त कर चुकने पर ही वे देश आवेंगे, इसी से उन की "देश वापिस आता हूं" यह खबर पा कर हम ने समझा कि उन्हो ने अस्त्र शस्त्र पहुचाने का कोई अच्छा बन्दोबस्त कर लिया है। किन्तु ठीक उसी समय एक और विश्वस्त सूत्र से हम ने जान पाया कि सरकार बहादुर विदेश से अस्त्र लाने के सभी संवाद जान गई थी और भारतवर्ष के तट के निकट दो तीन अस्त्र भरे जहाज भी वहीं पकड लिये गये हैं। पीछे राउलट कमिटी की रिपोर्ट में अनेकों बाते पढीं। विगत विप्लव युग के इतिहास का यह अश श्रीयुत नलिनीकिशोर गुह प्रणीत 'बागलाय विप्लववाद" में विस्तृत रूप से आलोचित हुआ है । विप्लव युग के इस अश को मैं नलिनी बाबू के ग्रन्थ से ही कुछ कुछ उद्धृत कर के पाठकों की भेंट करूगा।

---

(४) विदेश मे भारतीय विप्लववादी गण

भारत की विप्लव चेष्टा को सार्थक करने के लिए विदेशी राजशक्ति की सहायता अत्यन्त आवश्यक है यह बात भारत के प्राय सभी विप्लववादी स्वीकार करते थे। वे जानते थे कि पृथिवी पर अंग्रेजो के जो अनेक शत्रु हैं, सुविधा और सुयोग पाने पर वे भारतवासियों को भी अंग्रेजों के विरुद्ध सहायता देने मे पीछे न रहेंगे, और यदि भारतवर्ष मे वैसे उपयुक्त नेताओं का अविर्भाव हो जाय तो वे एक ऐसी अन्तर्राष्ट्रीय समस्या की सृष्टि कर सकेंगे जिस के द्वारा पृथिवी के शक्तिशाली साम्राज्यों के बीच प्रतिद्वन्द्विता और ईर्ष्या का सदुपयोग कर के वे भारतवर्ष को स्वाधीनता के उच्च शिखर पर ले जाने में समर्थ हो जाय।

ससार में ऐसे दृष्टान्तों का अभाव नहीं है जहा प्रबल राजशक्तियों के परस्पर के द्वन्द्व के कारण अपेक्षाकृत दुर्बल जातिया प्रबलों के ग्रास से छुटकारा पा गई हैं। एवं पुराने जमाने की अपेक्षा आजकल यह बात मालूम होता है और भी निःसशय रूप मे कही जा सकती है कि पृथिवी पर ऐसा कोई भी देश नहीं है जिस के भले बुरे अथवा उत्थान पतन के साथ पृथिवी के अन्य देशों का कोई भी सम्बन्ध अथवा स्वार्थ न हो।

से भारत के विप्लववादियों की दृष्टि पहले से ही विदेश की तरफ आकर्षित हुई थी, किन्तु वे यह भी भली प्रकार जानते थे कि भारत का विप्लवदल यदि उपयुक्त रूप से शक्तिशाली न होगा तो विदेशियों की सहायता भारतवासी ग्रहण न कर सकेंगे, और सहायता ले सकने वाले आदमी न रहें तो सहायकों के रहने से भी कुछ नहीं बनता। प्रबल की सहायता और प्रबल की दुर्बल को निगल लेने की चेष्टा इन दोनों के बीच जो भेद है उसे भारत के विप्लववादी खूब समझते थे, और ठीक इसी कारण से बहुत दिन तक जब तक घर में शक्ति न थी देश के विप्लवदल ने विदेशों की ओर दृष्टि नहीं लगाई थी।

किन्तु विप्लवचेष्टा के आरम्भ से ही इस प्रकार विदेशों की ओर दृष्टि रक्खी जाती तो गत जर्मन युद्ध के समय भारत का विप्लवायोजन बिलकुल व्यर्थ न होता। भारतीय विप्लवदल में वैसे कोई दूर दृष्टि वाले प्रतिभावान् उपयुक्त पुरुष न रहने से ठीक समयानुसार वे देश को भी तैयार न कर सके, और ठीक किस समय से विदेशियों के साथ सम्बन्ध सूत्र स्थापित करना उचित है सो भी वे निर्णय न कर सके।

विप्लववादी भारतवासियों में से सब से पहले श्याम जी कृष्ण वर्म्मा विदेश गये और उन के संस्पर्श से और उन की चेष्टा से अनेक विदेशस्थ भारतीय युवक विप्लव धर्म में दीक्षित होते रहे। सन् १९०५ के दिसम्बर महीने में श्याम जी ने इस बात का प्रचार किया कि वे छः उपयुक्त भारतवासियों को

छ हजार रुपया वृत्ति देंगे जिस से वे युरोप, अमेरिका और पृथिवी के अन्यान्य स्थानों में घूम कर भारतवासियों को स्वाधीनता के मन्त्र में दीक्षित करने लायक शिक्षा उपार्जन कर सकें। इसी समय एस आर राणा नामक एक महाराष्ट्र सज्जन ने श्यामजी के पास पैरिस मे इसी विषय का एक पत्र लिखा कि वे भी तीन भारतवासियो को छ हजार रुपया राह-खर्च की बावत वृत्ति देंगे, और ये वृत्तियां राणा प्रतापसिंह, शिवाजी और किसी स्वनामधन्य मुसलमान राजा के नाम पर समर्पित की जाँयगी। इन का उद्देश्य था इस प्रकार उपयुक्त शिक्षित भारतवासियो को भारत के बाहर ला कर विप्लव कार्य के उपयुक्त कर्मी रूप से तैयार कर देना। किन्तु इन की चेष्टा से कोई विशेष कार्य हुआ कि नहीं मुझे मालूम नहीं।

ईसवी सन् १९०६ मे विनायक दामोदर सावरकर नामक एक प्रतिभावान् महाराष्ट्र ब्राह्मण लण्डन में वैरिस्टरी पढने गये और इन के आने से श्यामजी कृष्ण वर्मा का काय खूब तेजी से अग्रसर हुआ। किन्तु ये भी विदेश की किसी भी राजशक्ति के साथ कोई भी सम्बन्ध-सूत्र स्थापित नहीं कर पाये।

विनायक सावरकर लण्डन मे ही रहते थे जब बंगाल के प्रसिद्ध हेमदास भी विलायत गये, किन्तु हेमदास बम ओर विस्फोटक पदार्थ बनाने की शिक्षा पाने की खातिर ही विदेश गये थे, इसी से उन्हों ने भी विदेशी राजशक्ति के साथ कोई भी सम्बन्ध स्थापित करने की चेष्टा नहीं की।

पजाब के विख्यात लाला हरदयाल भी इस समय विलायत में थे, एवं विलायत के विप्लववादियों के सस्पर्श में आ कर वे भी पूरे उद्यम से विप्लव कार्य में योग देने लगे, किन्तु इन्हों ने भी उस समय किसी राजशक्ति की सहायता लेने की ओर ध्यान नहीं दिया।

इसी बीच स्वदेशी आन्दोलन की प्रवल बाढ में बगाल प्लावित हो गया और बगाल के अशान्त युवकों के मन प्राण उस समय दु साध्य-साधन में, विपत्ति के मुँह मे कूद पडने लगे। इतने दिन तक केवल धनियों के ही सन्तान वैरिस्टरी अथवा आई सी एस् पढने के लिए अथवा विलायत के भोगविलास के दृश्य अपनी आखो देख आने के लिए ही भारत के बाहर जाया करते थे, किन्तु बगाल के नव जागरण के प्रभाव से कई युवक देश सेवा के आदर्श से उद्बुद्ध हो कर, और दूसरे भी अनेकों, जो देश में शान्त, सुबोध, भले लडके होने की ख्याति पाने से वञ्चित थे, जिन की उद्दाम प्रकृति की अशान्त गति देश की आवहवा मे प्रकाशित होने का सुयोग न पाती थी,— ऐसे भी अनेकों युवक अमेरिका में आ इकट्ठे हुए। इन में से श्रीयुत तारकनाथ दास के नाम से हम लोग सुपरिचित हैं।

श्यामजी कृष्ण वर्मा लण्डन मे कुछ दिन काम करने के बाद अन्त में फ्रान्स भाग आने को बाधित हुए। इस समय पेरिस में एक विप्लववादी पारसी रमणी भी थी, जिस का नाम था मैडम कामा।

लाला हरदयाल भी इसी बीच एक बार देश आ कर फिर अमेरिका वापिस चले आये। अमेरिका के कुछ एक विश्व विद्यालयों में उन्हों ने बीच में कुछ दिन हिन्दू दर्शनशास्त्र के अध्यापक का काम भी किया था। इसी समय तारकनाथ दास भी अमेरिका के एक विश्वविद्यालय मे अध्यापक नियुक्त हो गये थे। इन के सिवाय और भी एक बगाली सज्जन इस समय अमेरिका के एक विश्वविद्यालय मे अध्यापक का कार्य करते थे यही "बागलाय विप्लववाद" में उल्लिखित सुरेन्द्र कर थे कि नहीं कह नहीं सकता। अमेरिका मे "गदर" दल स्थापित होने के कुछ दिन बाद लाला हरदयाल और इन बगाली अध्यापक ने एक वार अमेरिका के तत्कालीन प्रेसिडेन्ट के साथ भेंट की और उन से अनुरोध किया कि अमेरिका मे भारतवासियो को युद्ध विद्या सीखने और अन्यान्य कई विषयों में सुयोग दिया जाय। अमेरिका के प्रेसिडेंट ने उन से भेंट ही की, उन के किसी अनुरोध को माना नहीं। इधर अकृतकार्य हो कर उन्हों ने अन्य एक राजशक्ति के पास अपना आवेदन रक्खा और इस दफा उन का आवेदन स्वीकृत भी हो गया। इस घटना का बन्दी जीवन प्रथम भाग मे (तीसरे परिच्छेद में) उल्लेख किया गया है। किन्तु अमेरिका के इस विप्लव दल के साथ भारत के विप्लव दल का वैसा सम्बन्ध न था।

इसी समय या इस से कुछ पहले बगाल की एक विप्लव समिति की ओर से एक युवक को बर्लिन भेजा

ये जर्मन सरकार के ऊपर कुछ प्रभाव न डाल सके। विदेशी राजशक्ति पर प्रभाव डालने के लिए जिस योग्यता और चरित्र बल की आवश्यकता होती है, इन युवक में उस का अभाव था।

जो हो, जिस समय अमेरिका में विप्लवदल एक विदेशी राजशक्ति के साथ सम्बन्धसूत्र स्थापित करने में कृतकार्य हुआ उस से कुछ ही दिन बाद युरोप का महायुद्ध छिड गया, और लाला हरदयाल, तारकनाथ आदि अमेरिका छोड युरोप भाग आये। उन की विप्लव की सुन्दर योजना इस प्रकार विफल हो गई।

लाला जी पहले कौन्स्टैन्टिनोपल आये और फिर जेनेवा हो कर बर्लिन में अन्यान्य भारतीय विप्लववादियों के साथ आ मिले।

युरोपियन युद्ध आरम्भ होते ही अलीगढ जिले के एक समृद्ध जमींदार श्रीयुत महेन्द्रप्रतापसिंह स्विटजरलैंड गये। लाला हरदयाल के जेनेवा आने पर महेन्द्रप्रताप के साथ उन की भेंट हुई। लाला हरदयाल जी के साथ वे बर्लिन आ उपस्थित हुए। इस प्रकार महेन्द्रप्रताप भारतीय विप्लवदल में आ मिले।

लाला हरदयाल आदि के चले आने पर अमेरिका के विप्लव दल का भार रामचन्द्र नामी एक विप्लववादी सज्जन पर डाला गया।

इस से पहले ही युरोप में भारतीय विप्लववादी एक दल संगठित कर चुके थे, इस युरोपियन विप्लव-दल के नेताओं में डा० चक्रवर्त्ती और श्रीयुत वीरेन चट्टोपाध्याय प्रमुख थे।

ये वीरेन चट्टोपाध्याय हमारे अघोर चट्टोपाध्याय महाशय के पुत्र हैं। श्रीमती सरोजनी नायडू और "शमा" पत्रिका की वर्त्तमान सम्पादिका श्रीमती मृणालिनी चट्टोपाध्याय इन्हीं वीरेन्द्र की ही बहनें हैं। वीरेन्द्र ने एक धर्मप्राण रोमन कैथोलिक युवती* का पाणिग्रहण किया है किन्तु इन दम्पति में यथेष्ट प्रेम रहने पर भी इन दोनो के ही धर्म-विश्वास इतने दृढ़ थे कि इन में परस्पर इन धर्मविश्वासो के कारण बडी अशान्ति रहती, इसी से अन्त में इन्हो ने अलग रहना आरम्भ कर दिया। अब भी इन मे से किसी ने दूसरा विवाह नहीं किया, और एक दूसरे से दूर दूर रहने पर भी इन के प्रेम में कोई व्यतिक्रम नहीं हुआ। वे ही युवती अब भी चट्टोपाध्याय महाशय का सब खर्च-भार उठाती हैं।

खैर जो हो, युरोपियन महायुद्ध आरम्भ हो जाने पर अमेरिका और युरोप के विभिन्न विप्लवदलों के नेता जर्मनी में एकत्रित हो गये और जर्मन सरकार के राजप्रतिनिधियों के साथ परामर्श कर के एक साथ भारत मे विप्लव सघटन करने का आयोजन करने लगे।

जर्मनी में जो सब भारतीय विप्लवी इकट्ठे हुए थे उन में से हरदयाल, तारकनाथ, बरकतुल्ला, चन्द्रकुमार चक्रवर्त्ती, हेरम्ब-

*उन का नाम है-ऐग्नेस स्मेडूले। उन के लेख प्राय भारतीय पत्रिकाओं में छपा करते हैं।

लाल गुप्त, वीरेन्द्र सरकार, महेन्द्रप्रताप और चम्पकरामन पिल्ले का नाम हम राउलट कमिटी की रिपोर्ट में देख पाते हैं। चम्पकरामन स्विटजरलैण्ड के विप्लवदल के सभापति थे। वीरेन चट्टोपाध्याय का नाम हम ने बहुत बार अनेक कागजों मे देखा है।

पहले हरदयाल आदि कई एक सज्जनो ने जर्मनी के बाहर से, सम्भवत स्टाकहालम शहर से एक पत्रिका निकाली। यह पत्रिका निकालने का उद्देश्य था युरोपियन देशों की भारत वासियो के प्रति सहानुभूति प्राप्त करना और अंग्रेज किस प्रकार इस बीसवीं शताब्दी में भारत का शासन करते हैं उस का विस्तृत परिचय युरोपवालों को देना। युरोप और अमेरिका में भारत-विषयक ज्ञान के प्रचार करने का कितना लाभ है, आज भी हमारे देश-नायक यह भली प्रकार नही समझ सके, क्योकि यदि वे समझ पाते तो उस तरफ अवश्य ध्यान देते।

इस प्रकार अपने स्वार्थों की सिद्धि के लिए प्रचार कार्य में अंग्रेज कितना रुपया खर्च करते हैं और कैसे विचारशील उपयुक्त व्यक्तियो को इस काम मे नियुक्त करते और उन की कैसी सहायता करते हैं, सो हमारे देश-नायको की नजर में अभी तक नहीं पडा, इसी से आज भी जब विदेशो में कुछ भारतवासी इस बात का प्रचार करते हैं कि भारतवासी ससार मे स्वाधीन होकर ही रहना चाहते हैं तब हमारे अपने देश में देश के नेतागण बृटिश साम्राज्य की महिमा कीर्तन करते हैं। खैर, जाने दो उस बात को।

एक तरफ जैसे प्रचार का कार्य चलने लगा दूसरी तरफ वैसे ही भारतवासियो को अस्त्र शस्त्र जुटवा देने का भी आयोजन आरम्भ हो गया, सब कुछ हुआ पर उचित समय पर कुछ भी न हुआ। चीन के शाघाई शहर मे जर्मनी के जो राज-प्रतिनिधि (German Consul General) थे, उन्हीं के ऊपर यह अस्त्रादि भिजवाने का सब भार था। फिर ये भी अमेरिका के वाशिग्टन शहर मे जो जर्मन राजप्रतिनिधि थे उन के आदेशानुसार सब काम करते थे। इस प्रकार युरोप और अमेरिका के सभी भारतीय विप्लवनेता जर्मनी के राजप्रतिनिधि और युद्ध-सचिवों की सहकारिता से भारत मे विप्लव की आग प्रज्वलित करने का आयोजन करने लगे।

जर्मनी के विभिन्न विद्यापीठों मे जो सब भारतीय युवक पढते थे, अंग्रेजो के साथ युद्ध छिड़ते ही जर्मन गवर्न्मेंट ने पहले उन्हें कैद कर लिया, और पीछे उन में से बहुतों को भारत में विप्लव-प्रचार के कार्य के लिए सम्मत कर लिया और उन के हाथ मे भरपूर रुपया देकर उन्हे भारत भेज दिया, तब भी सम्भवत युरोप के (भारतीय) विप्लववादियो के साथ जर्मन गवर्न्मेंट की कोई बातचीत न हुई थी। इस प्रकार जर्मनी से रुपया लेकर जो देश मे आये उन मे से प्राय सभी ने वह रुपया हजम कर लिया। उन मे से केवल दो एक जनो ने देश मे आकर विप्लवदल के लोगो के साथ भेंट की। युरोपियन विप्लव-दल यदि पहले से ही सतर्क और चेतन हो कर कार्य करता तो

ये सब विश्रृङ्खल घटनायें होने की सम्भावना न रहती। राउलट कमिटी की रिपोर्ट पढ कर तो मालूम नहीं होता कि युरोप में वैसा कोई शक्तिशाली विप्लवदल था, अमेरिका के "गदर" दल ने ही युरोप में जाकर जो कुछ हो सका किया।

जो हो जर्मन एक्सपर्टस (विशेषज्ञों) के साथ परामर्श कर के तय हुआ कि बर्मा की सीमा के पास हो भारत में विप्लव-प्रयासी युवकों को युद्ध विषयक कुछ कुछ शिक्षा दे कर बर्मा पर आक्रमण करना होगा और जिस किसी उपाय से हो, विप्लव चलाने के लिए उपयुक्त अस्त्र-शस्त्र भारतवर्ष में विप्लववादियों के हाथ मे पहुँचा ही देने होंगे। "गदर" दल के कुछ एक सिक्ख जैसे भारतवर्ष में आये थे वैसे ही और भी बहुत से सिक्ख उस समय अमेरिका, चीन और मलय उपद्वीप मे भी थे, इन के द्वारा ही बर्मा पर आक्रमण करने का उद्योग चलता था। उस समय बटेविया (जावा की राजधानी) मनीला (फिलिपाइन्स की राजधानी) बंगकोक (स्याम की राजधानी) और शांघाई आदि स्थानों में भारतीय विप्लवियों का आना जाना हर दम जारी था।

इधर जैसे "गदर" दल का आयोजन चलने लगा, उधर वैसे ही भारत के दल भी बाहर के विप्लव दल के साथ मिल जाने की यथाशक्ति चेष्टा करने लगे। सम्भवत १९१५ ईसवी के फरवरी महीने मे यतीन बाबू के दल के श्रीयुत भोलानाथ चट्टोपाध्याय बंगकोक गये, किन्तु इन के द्वारा कार्य कितना

आगे यदा सो कह नहीं सकता, यतीन्द्रनाथ लाहिडी नामक एक युवक के युरोप से आने के बाद ही उन के कथनानुसार यतीन बाबू के दल के नरेन्द्रनाथ अप्रैल मास में पहले बटेविया गये, और तभी से असल कार्य आरम्भ हुआ। रासविहारी भी अप्रैल मास में ही शांघाई मे थे, बटेविया और बगकोक का सम्पूर्ण आयोजन शांघाई के जर्मन कौन्सल जनरल के परामर्श से और "गदर" दल की सहायता से ही चलता था। बटेविया के "गदर" दल के साथ बंगाल के दल का सयोग स्थापित हो गया था।

२२ अप्रैल सन् १९१५ के दिन कैलिफोर्निया के सान् पेड्रो बदर से मैवरिक नामी एक जहाज भारत के उपकूल की ओर प्रस्थित हुआ। यह जहाज पहले स्टैन्डर्ड आयल कम्पनी का तेल लाने ले जाने के काम आता था, पीछे सान्फ्रांसिस्को की एक जर्मन कम्पनी ने इसे खरीद लिया था। चलते समय इस जहाज में सब मिल कर २५ कर्मचारी और ५ नौकर बने हुए व्यक्ति थे। ये अपने को ईरानी बतलाते थे, पर थे असल में भारतवासी ही। सान्फ्रांसिस्को के जर्मन कौन्सल और विप्लवदल के रामचन्द्र के उद्योग से ही यह जहाज भेजा गया था। बात थी कि आनी लार्सन (Annie Larsen) नामक एक और छोटा जहाज अस्त्रादि ले कर इस मैवरिक के साथ रास्ते में मिलेगा और लार्सन के अस्त्रादि मैवरिक ले लेगा। किन्तु आनी लार्सन समय पर मैवरिक से मिल न सका, इस से विवश हो कर मैवरिक

केवल कुछ भारतवासियो और जर्मन एक्सपर्टस (विशेषज्ञों) को लेकर बटेविया आगया। बटेविया के उच्च अधिकारियों ने मैवरिक की खानातलाशी कराई। किन्तु कोई आपत्तिजनक वस्तु न पाकर मैवरिक को छोड दिया। दूसरी ओर आनी लार्सन (Annie Larsan) जून महीने के अन्त के करीब अस्त्रादि ले कर वाशिंग्टन पहुँचा, किन्तु अमेरिका की सरकार ने वे सब अस्त्रादि ज़ब्त कर लिये, वाशिंग्टन के जर्मन कौन्सल ने उन सब अस्त्रो के लिए दावा किया, पर अमेरिकन सरकार न उसे नामंजूर किया। मैवरिक अन्त मे बटेविया से अमेरिका लौट आया और उसी में नरेन्द्रनाथ (जिन का वर्तमान नाम, मानवेन्द्रनाथ राय—एम् एन् राय है) अमेरिका भाग गये।

हेनरी एस् (Henry s) नामक एक और जहाज़ अस्त्रादि ले कर मनीला पर्यन्त आ गया, किन्तु वहा फिलिपाइन अधिकारियों ने वे सब अस्त्र जहाज मे उतरवा लिये। इस जहाज़ में बोहेम नामक एक जर्मन सेनापति थे, इन्ही पर सुनते हैं वर्मा की सीमा के निकट भारतीय विप्लववादियों को सामरिक शिक्षा देने का भार था। ये सिंगापुर मे पकडे गये। जावा के जर्मन कौन्सल के साथ परामर्श कर के नरेन्द्रनाथ ने ठीक किया था कि मैवरिक के सब अस्त्रादि बंगाल मे रायमंगल के पास उतारे जायेंगे। रायमंगल में भी इस बात का सब आयोजन हो गया था, पर मैवरिक आया नहीं। जुलाई १९१५ में अंग्रेज सरकार सब बातें जान पाई, और उस के फलस्वरूप भारत

में धर-पकड़ आरम्भ हो गई।

किन्तु इस के बाद भी रासबिहारी ने फिर देश में अस्त्र भेजने का आयोजन किया। इस आयोजन के अनुसार दिसम्बर १९१५ में भारत में विप्लव आरम्भ होने की बात थी। इस बार का आयोजन इस प्रकार का था कि एक जहाज अस्त्रादि ले कर अन्दमान के सब राजनैतिक कैदियों को मुक्त कर के सीधा बर्मा पर आक्रमण करता और दूसरे दो जहाज अस्त्रादि ले कर भारत के तट पर आते। बंगाल के विप्लव दल की सहायता करने के लिए ६६ हजार गिल्डर्स (हालैंड का चाँदी का सिक्का) ले कर एक चीनी सज्जन भारत की ओर आते थे। ये भी सिंगापुर में पकड़े गये। इन के पास रुपए के अतिरिक्त विनाग के एक बंगाली का पता और कलकत्ते के दो पते पाये गये। सिंगापुर में अवनी मुखर्जी नामक एक और विप्लवी पकड़े गये। उन की नोटबुक में रासबिहारी का शांघाई का पता, शांघाई के दो चीनियों का पता, चन्दननगर के मतिलाल राय का पता, कलकत्ता, ढाका और कुमिल्ला के कुछ पते एवं स्याम के एक सिक्ख इञ्जीनियर अमरसिंह का पता पाया गया। शांघाई में खानातलाशी हुई और जिन दो चीनियों के पते अवनी बाबू की नोटबुक में पाये गये थे उन के पास बहुत से रिवाल्वर और कई हजार गोलियाँ पाई गईं। पहले के आयोजन में यह ठीक हुआ था कि हेन्री एस जहाज अस्त्रादि ले कर स्याम के इन्हीं इञ्जीनियर अमरसिंह के पास जाता और उन अस्त्रों

आदि का कुछ अश अमरसिंह के जिम्मे मे रख देता। राउलट सिडीशन कमिटी की रिपोर्ट में छपा है कि अमरसिंह को फासी दी गई है, किन्तु इन्हीं अमरसिंह के साथ मेरी अन्दमान मे भेंट हुई थी। यह सच है कि इन्हें फासी का हुक्म हुआ था किन्तु दूसरे अनेक विप्लवियों के साथ इन्हें भी फासी के बदले आजन्म कालापानी हो गया था।

जो कुछ एक अस्त्रपूर्ण जहाज् भारत की ओर आते थे, सुना था कि उन में एक को डच सरकार ने अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध के नियमों के अनुसार पकड लिया था,, और एक को सुनते हैं, अग्रेज़ों की लडाई के जहाज एच् एम् एस् कार्नवाल (H M. S Cornwall) ने अन्दमान के निकट डुबा दिया था। तीसरे जहाज का क्या हुआ कह नहीं सकता। इसी बीच यतीन बाबू के दल के एक और युवक भी शाघाई आये, किन्तु बडी मुश्किल से शाघाई पहुंचते ही वे पकड लिये गये।

इस प्रकार विप्लव-योजना की तीसरी चेष्टा भी व्यर्थ हुई। युरोपियन महायुद्ध आरम्भ होने के एक बरस बाद तक भी भारत के बाहर जाना आना वैसी कठिन बात न थी, किन्तु जब अग्रेज सरकार को विप्लव-योजना के सभी सम्वाद मिल गये तब से भारत के बाहर जाना आना अत्यन्त कठिन कार्य हो गया और इसी कारण अस्त्रपूर्ण जहाज् अग्रेजों की प्रखर दृष्टि से बच न सके। इस के सिवाय जर्मनो को भी पश्चिमी सीमान्त के युद्ध में इतना व्यस्त होना पडा कि इधर वे उस प्रकार

ध्यान न दे सके। भारतीय विप्लवदल भी अपने अस्तित्व का ऐसा कुछ परिचय न दे सका कि विदेशी राजशक्तियों की दृष्टि इधर आप से आप खिंचती। यदि युद्ध के बहुत पहले से ही भारतीय विप्लवदल विदेशों की ओर इस प्रकार ध्यान दे सकते तो अवश्य ही और तरह का फल होता।

जो लोग यह सोचते हैं कि संसार की इम्पीरियलिस्टिक (साम्राज्यकामी) गवर्न्मेंटों से भारतीय विप्लववादियों की सहायता पाने की आशा बिलकुल दुराशा थी उन्हें जान लेना चाहिए कि संसार की इन साम्राज्यकामी गवर्न्मेंटों की परस्पर-शत्रुता के कारण ही चीन अब तक अत्यन्त बुरी अवस्था में रहने पर भी एकदम असहाय होकर पराधीनता की जकड़ में नहीं आया, अफगानिस्तान, फारिस, तुर्की आदि देश भी इसी प्रकार विभिन्न राजशक्तियों की सहानुभूति और सहायता पा कर ही क्रमशः एक एक शक्तिशाली जाति के रूप में परिणत होते जाते हैं, पिछले बोअर युद्ध के समय जर्मनी ने बोअरों की अस्त्र शस्त्र द्वारा कम सहायता नहीं की, और अभी पिछले युद्ध के कारण तुर्की की दशा तो एकदम निहाल हो गई है, कमाल पाशा ने तो उस समय एक प्रकार से तुर्की गवर्न्मेंट के विरुद्ध ही विद्रोह-घोषणा कर के मित्र शक्तियों के सन्धिपत्र को भी निकम्मा कर दिया, किन्तु ऐसा हो सका फ्रांसीसियों की सहायता से, और फिर आज भी एकदम फ्रांसीसियों पर ही बिलकुल निर्भर न रहना पड़े इसी लिए अमेरिका के साथ

अगोरा की जान पहचान बनाने की चेष्टा चल रही है।

अमल बात यह है कि दुनिया में यदि कोई माथा ऊंचा कर के खड़ा हो सके तो उसे सहायता का अभाव नहीं रहता, अन्दर की शक्ति के अभाव से ही सभी लाञ्छनायें होती हैं, अन्दर की दीनता से ही कङ्गाली होती है, "बाहर से दिया ही जा सकता है, किन्तु लेना होता है अपने गुण से।" *

* यह अध्याय प्रधानतः राउलट कमिटी की रिपोर्ट के आधार पर लिखा गया है। नलिनी बाबू के "बांगालाय विप्लववाद" पर निर्भर नहीं कर सका।—लेखक।

पांचवां परिच्छेद

बर्मा की कहानी

भारतवासियों के प्रयत्न से ब्रह्मदेश में जो विप्लव की चेष्टा हुई उस के बहुत पहले से ही वहां के स्वाधीनता-प्रयासी र्मियों ने भी बहुत बार विप्लव का आयोजन किया था। न्डमान में भी इस प्रकार के राजनैतिक अपराधों में दण्डित हुत से बर्मी थे। युद्ध समाप्त होने के बाद ही उन में से प्राय र्मी को छोड़ दिया गया था। तो भी अंग्रेज गवर्नमेंट इन सब प्लव चेष्टाओं को भय की दृष्टि से न देखती थी। जान पड़ता कि इस का कारण यह था कि यह सब विप्लवान्दोलन एक यापक जातीय जागरण का फल न था, इसी से वैसा शक्ति-शाली भी न हो सका था। किन्तु भारतीय विप्लववादियों की चेष्टा से बर्मा में भी अत्यन्त निविड रूप से विप्लव का आयोजन हो गया था। राउलट रिपोर्ट में लिखा है–"Burma, however has not been altogether free from criminal conspiracy connected with the Indian revolutionary movement It has been the scene of determined efforts to stir up mutiny among the military forces and to overthrow the British Government"

'यर्मा भी भारत के विप्लवान्दोलन मे सम्बद्ध पड्यन्त्रों से नच
नहीं रहा । ब्रिटिश सरकार को उखाड डालने और सेनाओं मे
बलवा खडा कर देने की दृढ चेष्टाओं को वह रंगस्थली ब
चुका है।" किस प्रकार ये दृढ चेष्टायें-determined efforts
हुई थीं उस का कुछ सक्षिप्त परिचय देता हू ।

गत तुर्की-इटालियन युद्ध के समय भारतवर्ष के मुसलमान
ने एक मैडिकल मिशन अर्थात् युद्ध मे घायलो की सेवा के
लिए एक दल तुर्की भेजा था। इस दल में फैजाबाद के निक
अकबरपुर के रहने वाले अली अहमद सिद्दीकी नाम
एक तरुण युवक भी थे, अपने सरक्षकों को पता दिये बिना ह
उन्हों ने दल मे प्रवेश किया था और भारत का तट छोड़ने से
पहले घर के लोगों को केवल एक पत्र से जता दिया था कि वे
भारतीय मैडिकल मिशन में शामिल हो कर तुर्की जाते हैं।

तुर्की में कार्यवश इन्हें अनवर पाशा के साथ प्राय चा
मास तक समराङ्गण में ही रहना पडा। उस समय इन्हों ने
अनवर पाशा के जीवन की अनेक रहस्यपूर्ण कहानिया सुनीं
तुर्की-इटालियन और तुर्की-ग्रीक युद्ध के समय अंग्रेजो की कूट
राजनीति की महिमा का तुर्क लोगों ने मर्मान्तिक अनुभव कर
पाया था, अंग्रेजों की कूटनीति की कहानी, तुर्की के भाग्यनि
यन्ता उस यग टर्क (तरुण तुर्क) दल की कहानी, किस प्रकार
इस तरुण तुर्क दल ने तुर्की में पहले पहल अपने को प्रकट किया,
प्रकार इस तरुण दल ने मृतप्राय तुर्क समाज में नव

का सञ्चार कर के विप्लव पथ में चलते हुए अबदुल हमीद के समान प्रबल दुर्दान्त और क्रूर सुलतान को पदच्युत कर के तुर्की में नवीन नियमतन्त्र राज्यप्रणाली का प्रवर्त्तन किया ये सब बातें, दिन पर दिन, अली अहमद, अनवर पाशा के पास स्वप्नाविष्ट की तरह एकान्त तन्मय होकर सुनते थे। मुस्लिम जगत् की कितनी ही मर्म-कथायें, कितनी ही वीरता की कहानिया, कितनी ही मनुष्योचित अभिव्यक्ति की घटनायें सुन सुन कर उन का हृदय मानो एक अननुभूत आनन्द से खिल उठता, मुस्लिम-जगत् के गौरवमय उज्ज्वल भविष्य का चित्र उन्हे अधीर सा कर डालता था। तुर्की के एक सर्वप्रधान युरोप प्रसिद्ध सेनापति और प्रसिद्धनेता जो तुर्की के भाग्य-परिवर्त्तन के प्रधान अवलम्ब थे, जब ऐसे एक प्रसिद्ध व्यक्ति भारत के एक नगण्य तरुण युवक के साथ निःसङ्कोच दिल खोल कर बातें करते होते, तब एक ओर जहा उन की प्रशस्त उन्नत छाती फूल कर स्पन्दन करने लगती, वहा दूसरी ओर वैसे ही उसी एक मुहूर्त में उन का मन भारत की उस हीनता और दीनता पूर्ण जीवन यात्रा के प्रतिदिन के अपमानों की कहानी स्मरण कर मानो अनजाने में ही घोर अंग्रेज-विद्वेषी हो उठता, और उन की धमनियों का रक्त नाच नाच कर दुर्निवार वेग से उन्हे विप्लववादियों के दल में खींच कर ला रखता।

पीछे अली अहमद आदि कई भारतवासियों ने तुर्की का ... की इच्छा प्रकट की तो तुर्की के भिन्न भिन्न स्थानों के

'बर्मा भी भारत के विप्लवान्दोलन से सम्बद्ध षड्यन्त्रों से बचा नहीं रहा । ब्रिटिश सरकार को उखाड डालने और सेनाओं में बलवा खडा कर देने की दृढ चेष्टाओं की वह रगस्थली बन चुका है।" किस प्रकार ये दृढ चेष्टाये–determined efforts–हुई थीं उस का कुछ सक्षिप्त परिचय देता हू ।

गत तुर्को-इटालियन युद्ध के समय भारतवर्ष के मुसलमानों ने एक मैडिकल मिशन अर्थात् युद्ध में घायलों की सेवा के लिए एक दल तुर्की भेजा था। इस दल मे फैजाबाद के निकट अकबरपुर के रहने वाले अली अहमद सिद्दीकी नामक एक तरुण युवक भी थे, अपने सरक्षकों को पता दिये बिना ही उन्हों ने दल मे प्रवेश किया था और भारत का तट छोडने से पहले घर के लोगो को केवल एक पत्र से जता दिया था कि वे भारतीय मैडिकल मिशन मे शामिल हो कर तुर्की जाते हैं।

तुर्की में कार्यवश इन्हे अनवर पाशा के साथ प्रायः चार मास तक समराङ्गण में ही रहना पडा। उस समय इन्हों ने अनवर पाशा के जीवन की अनेक रहस्यपूर्ण कहानिया सुनीं। तुर्को-इटालियन और तुर्को ग्रीक युद्ध के समय अग्रेजो की कूट राजनीति की महिमा का तुर्क लोगो ने मर्मान्तिक अनुभव कर पाया था, अग्रेजों की कूटनीति की कहानी, तुर्की के भाग्यनियन्ता उस यग टर्क (तरुण तुर्क) दल की कहानी, किस प्रकार इस तरुण तुर्क दल ने तुर्की में पहले पहल अपने को प्रकट किया, किस प्रकार इस तरुण दल ने मृतप्राय तुर्क समाज में नव चेतना

का सञ्चार कर के विप्लव पथ में चलते हुए अबदुल हमीद के समान प्रबल दुर्दान्त और क्रूर सुलतान को पदच्युत कर के तुर्की में नवीन नियमतन्त्र राज्यप्रणाली का प्रवर्त्तन किया ये सब बातें, दिन पर दिन, अली अहमद, अनवर पाशा के पास स्वप्नाविष्ट की तरह एकान्त तन्मय होकर सुनते थे। मुस्लिम जगत् की कितनी ही मर्म-कथायें, कितनी ही वीरता की कहानिया, कितनी ही मनुष्योचित अभिव्यक्ति की घटनायें सुन सुन कर उन का हृदय मानो एक अननुभूत आनन्द से खिल उठता, मुस्लिम-जगत् के गौरवमय उज्ज्वल भविष्य का चित्र उन्हे अधीर सा कर डालता था। तुर्की के एक सर्वप्रधान युरोप प्रसिद्ध सेनापति और प्रसिद्धनेता जो तुर्की के भाग्य-परिवर्त्तन के प्रधान अवलम्ब थे, जब ऐसे एक प्रसिद्ध व्यक्ति भारत के एक नगण्य तरुण युवक के साथ नि:सङ्कोच दिल खोल कर बातें करते होते, तब एक ओर जहा उन की प्रशस्त उन्नत छाती फूल कर स्पन्दन करने लगती, वहा दूसरी ओर वैसे ही उसी एक मुहूर्त मे उन का मन भारत की उस हीनता और दीनता पूर्ण जीवन यात्रा के प्रतिदिन के अपमानों की कहानी स्मरण कर मानो अनजाने में ही घोर अंग्रेज-विद्वेषी हो उठता, और उन की धमनियों का रक्त नाच नाच कर दुर्निवार वेग से उन्हे विप्लववादियों के दल में खींच कर ला रखता।

पीछे अली अहमद आदि कई भारतवासियों ने तुर्की का देश देखने की इच्छा प्रकट की तो तुर्की के भिन्न भिन्न स्थानों के

राजप्रतिनिधियों ने बड़ा समारोह कर के राज-सम्मान के स
उन्हें अपना सारा देश दिखलाया। इस प्रकार देश में भ्र
करते समय जब नगर नगर में तुर्क नर नारी इकट्ठे हो कर उ
स्वर से जयकारे बुला कर उन का आदर करते, जब राजपथ
दोनों ओर झरोखों में से सुन्दरियों की उत्सुक दृष्टि और
के हाथों से टपके हुए फूल उन के अंगों पर झड़ पड़ते, तब
भारतवासी तुर्कदेश को भारतवर्ष की अपेक्षा भी सौगु
अधिक अपना समझ चाहने लगते। स्वदेश में उन्हें अंग्रेजों
नजदीक जो सलूक मिलता उस के साथ वे इन तुर्कों के व्य
हार की तुलना किये बिना न रह सकते, इस प्रकार अली अ
मद विप्लव मन्त्र में दीक्षित हुए, और अन्य अनेक भारतव
मुसलमानों की तरह अली अहमद भी तरुण तुर्क (यंग टर्
दल में शामिल हो गये।

इसी तुर्की-इटालियन युद्ध के समय पंजाब के एक अ
युवक, अबूसैयद, रंगून से ईजिप्ट गये और फिर ईजिप्ट
तर्की आये। इन्हीं अबूसैयद के अनुरोध और प्रस्ताव से त
तुर्क दल के एक सदस्य, ताफिक बे को सन् १९१६ में रं
भेजा गया। रंगून के एक मुसलमान व्यवसायी अहमद मु
दाऊद को ताफिक बे तुर्की का कौन्सल नियुक्त करा गये
पिछले युद्ध के समय यह मुल्ला दाऊद ही तुर्की के कौन्सल रू
से रंगून में थे।

बलकान युद्ध समाप्त हो जाने पर अथवा युरोपीय यु

आरम्भ हो जाने के बाद अली अहमद देश में लौट आये और कुछ दिन घर पर रह कर अपनी स्त्री के आभूषण आदि बेच कर कुछ थोड़ा रुपया बना व्यापार करने के लिए रंगून चले आये। कौन्स्टैन्टिनोपल से फायमअली नामक एक और भारतीय मुसलमान को तुर्क लोगों ने दिसम्बर सन् १९१४ में तरुण तुर्क दल का प्रतिनिधि बनाकर रंगून भेजा। फायम अली और अली अहमद सिद्दीकी दोनों ने रंगून आकर परस्पर मिलने के बाद तुर्की के नेतृत्व में बर्मा में विप्लव-षड्यन्त्र आरम्भ कर दिया। कुछ ही दिनों में इन्हों ने स्थानीय मुसलमानों के पास से १५ हजार रुपया चन्दा जमा कर लिया। इस चन्दा करने के सम्बन्ध में एक बात यहाँ कहे बिना नहीं रह सकता वह यह कि बंगाल के सम्पन्न व्यक्ति विप्लववादियों को धन से जरा भी सहायता न करते थे, इसी से बंगाल में राजनैतिक डकैती का प्रादुर्भाव अनिवार्य हो गया था।

एक ओर यदि ये पैन-इस्लामिक (विश्व-इस्लामिक) दल के मुसलमान विप्लव का आयोजन करते थे, तो दूसरी ओर अमेरिका का 'गदर" दल भी निश्चेष्ट न था। खेमचन्द दामजी नामक एक गुजराती सज्जन किसी समय रंगून से अमेरिका गये और अमेरिका में आते ही वहा के गदर दल में सम्मिलित हो गये। पहल पहल इन्हीं खेमचन्द की सहायता से केवल बर्मा मे 'गदर' पत्रिका भेजी जाया करती थी, युद्ध के समय यह पत्रिका गुज-राती, हिन्दी और उर्दू तीन भाषाओं में छापी जाती थी। युरो-

युद्ध के कारण बर्मा के मुसलमान लोग कुछ उत्तेजित हो उठे
और इस "गदर" पत्रिका के प्रभाव से उत्तेजना का स्रोत क्रम
बढ़ता गया। इसी समय बम्बई में बिलोची पल्टन के एक
निक ने अपने अंग्रेज अफ़सर की हत्या कर डाली, जिस से
सेनादल को फिर युरोप न भेज कर रंगून में रोक रक्खा गय
रंगून के मुसलमान "गदर" अखबार के सहारे इस सेना
विप्लव की बातों का प्रचार करते रहे, फलत जनवरी १९
तक यह सेनादल खुल्लमखुल्ला विप्लव आरम्भ करने को उद्य
हो गया, किन्तु समाचार का आभास मात्र मिलते ही सेन
पतियों ने इस दल को कठोर दण्ड दिये। २०० बिलोचों
भारत की भिन्न भिन्न जेलों में भेज दिया।

इस समय सिंगापुर में दो रेजिमेन्टें थीं उन मे से एक
साथ बर्मा के मुसलमान विप्लवी दल का जोडतोड हो गया
सिंगापुर के कासिम मनसूर नामी एक गुजराती मुसलमान
रगून में अपने पुत्र को पत्र लिखा, उस में तुर्की के जो कौन्स
रगून में थे उन के नाम भी एक पत्र था। उस पत्र में लिखा थ
सिंगापुर का एक सेनादल विद्रोह कर के तुर्की का साथ दे
को तैयार है और इस समय तुर्की का एक लडाऊ जहा
सिंगापुर में आना आवश्यक है। यह पत्र अंग्रेजों के हाथ ल
गया और सिंगापुर की उस रेजिमेन्ट को दूसरी जगह भेज
दिया गया।

इसी बीच अमेरिका के "गदर" दल के लोग भी सिंगापु

में आ उपस्थित हुए । इन्हों ने एक ओर जहा उसी सिंगापुर की दूसरी सेना के बीच प्रचार आरम्भ कर दिया वहा दूसरी ओर बर्मा में भी अपने आदमी भेजे। सन १९१५ के आरम्भ मे ही सोहनलाल पाठक और हसनरजा नामक गदर दल के दो व्यक्तियो ने बगकोक से रगून आ कर अपना केन्द्र स्थापित कर दिया । यहा एक बात गौर करने की है कि "गदर" दल मे मुसलमानो को भी लिया जाता था, किन्तु मुसलमान निप्लव दल मे हिन्दुओ के लिए स्थान न था।

सिंगापुर की सेना में प्रचार करने का फल यह हुआ कि इस बार सचमुच ही विप्लव आरम्भ हो गया। यद्यपि इस सिंगापुर के विप्लवायोजन के साथ पजाब के विप्लवायोजन का कोई भी सम्बन्ध न था, तो भी आश्चर्य की बात है कि २१ फरवरी सन् १९१५ को सिंगापुर मे विप्लव शुरु हुआ और पजाब मे भी ठीक यही २१ फरवरी विप्लव शुरु करने की तिथि निश्चित हुई थी । इस २१ फरवरी के दिन सिंगापुर के सैनिक बहुत दिनो के सस्कारो को तोड कर खुल्लमखुल्ला अंग्रेजों के विरुद्ध खड़े हो गये। एक सप्ताह के लिए सिंगापुर भारतीय सेना के हाथ में हो गया, किन्तु सिंगापुर भारत के बीच मे न था इस से वह विप्लव की आग चारो तरफ फैल न सकी, और एक सप्ताह के बाद रूसी, जापानी और अंग्रेजों के लड़ाऊ जहाजो ने आ कर सिंगापुर को घेर लिया। इस एक सप्ताह भर विप्लवियों ने स्थानीय अंग्रेज सेना के साथ

से युद्ध किया था, और अंग्रेज सेना को उस युद्ध में हार भी माननी पडी थी। किन्तु रूस इग्लैंड और जापान के जगी जहाज आ जाने पर दो एक दिन की लडाई के बाद अन्त में वाध्य हो कर विप्लवियो को भागना पडा। विप्लवियों ने वनो-जगलों में जा कर आश्रय लिया, जो भाग न सके वे वहीं अंग्रेजों के हाथ वन्दी हो गये। सिंगापुर से भाग कर एक ही वार छुटकारा पाने का भी कोई उपाय न था, इस लिए कुछ ही दिनों मे प्राय सभी विप्लवी पकडे गये।--अंग्रेजी अखवारो में छपा सिंगापुर में एक दगा हो गया, किन्तु अंग्रेज़ गवर्न्मेंट और भारतीय विप्लव दल दोनों ही को नि सशय रूप से समझ आ गया कि विप्लवियो का देशी सिपाहियो को हाथ मे कर लेना कुछ वैसी कठिन वात नहीं है।

सिगापुर की दुर्घटना के वाद "गदर" दल के दो एक वचे हुए व्यक्ति वर्मा चले आये और पूरे उद्यम से फिर वे देसी सेना मे विप्लव की वात का प्रचार करने लगे। एक तरफ जैसे वर्मा के सेनादल में विप्लव प्रचार चलने लगा, दूसरी तरफ वैसे ही वर्मा के सीमान्त पर स्याम में भी जर्मनो की सहायता से विप्लव का आयोजन होता रहा। उत्तर स्याम प्रदेश में जर्मन इञ्जीनियरों की अधीनता में एक रेलवे लाइन तैयार होती थी। इस कार्य मे अधिकाश मिस्तरी और मजदूर पजावी ही थे। इसी रेलवे लाइन की दिशा से वर्मा पर आक्रमण करने की योजना चलने लगी। अमेरिका, चीन आदि देशों से लौटे

हुए सिक्ख और पंजाबी यहाँ स्याम के सामान्त में इकट्ठे होने लगे।

शिवदयाल कपूर नामक एक सिक्ख (पंजाबी ?) अमरिका से लौटते समय शंघाई आये, शंघाई में एक जर्मन ने इन्हीं की मार्फत बहुत सा रुपया बंगकोक के जर्मन कौन्सल के पास भेजा। इस रुपये का कुछ अंश बर्मा जाने वाले सिक्खों की खातिर खर्च हुआ और बाकी बंगकोक के एक बंगाली वकील की मार्फत बंगाल के विप्लवियों के पास भेजा गया। इसी बंगाली वकील ने, कहते है, यह सब विप्लवायोजन की बात अन्त में अंग्रेज गवर्न्मेंट के सामने खोल दी। जो विप्लवायोजन युद्ध छिड़ने से बहुत पहले से ही करना उचित था जब वही आयोजन युद्ध के समय में बड़ी दौड़धूप में किया गया, तब ऐसे अपदार्थ जीवों से भी काम लेना आवश्यक हो गया। न जाने किस की सिफारिश पर इस बंगाली वकील को इस काम पर लगाया गया था। जो भी हो इस प्रकार विदेश की विप्लवयोजना विफल हुई। —किन्तु बर्मा के कार्यकर्ताओं ने एक बार और विप्लव की चेष्टा कर देखी।

सोहनलाल पाठक और नारायणसिंह ये दो जने एक बार फिर बर्मा में विभिन्न स्थानों की छावनियों में जा कर सिपाहियों के बीच विप्लवमन्त्र का प्रचार करने लगे। सोहनलाल बर्मा के एक गोलन्दाज सिपाहियों के दल में अंग्रेज विद्वेष फैलाने लगे, अंग्रेजों की तरफ रह कर प्राणों की वलि देने में कुछ-

सार्थकता नहीं है यही बात उन्हें समझाने लगे। यदि प्राण देने ही हों तो स्वदेश और स्वधर्म के लिए प्राण देने का कितना महान् गौरव है सो भी सिपाहियों को समझाने लगे। सिपाहियों के द्वारा भले ही उन का कोई अनिष्ट न हुआ, किन्तु सिपाहियों के एक जमादार ने एक दिन सोहनलाल को पकड़ लिया। उस दिन उस जगह उस जमादार और सोहनलाल के सिवाय और कोई नहीं था। सोहनलाल के जामे की पाकेट में तब दो तीन रिवाल्वर और भरपूर गोलिया भी थीं, किन्तु क्या जाने सोहनलाल उस घडी किस स्वप्न की खुमारी में थे कि उस दिन रिवाल्वर की सहायता से उन्हों ने उस प्राणघाती जमादार के हाथ से मुक्ति पाने की कोई चेष्टा ही नहीं की। उस दिन ऐसी अवस्था में सोहनलाल के मुह से केवल कुछ ऐसे ही शब्द निकले थे—"अरे भाई! तू मुझे पकडा देगा? तू क्या भूला जाता है कि मैं तेरा भाई हू? भाई हो कर भाई को पकडा देगा? भाई को पकडा देने में तुझे क्या कुछ भी दर्द नहीं होता? अरे, तू कैसा भाई है, भाई हो कर भाई को पकड़ाए देता है?" लेकिन जमादार सोहनलाल को खींच ही ल चला। यह सच है कि सोहनलाल बहुत बलिष्ट न थे किन्तु यह बात भी सच है कि कोई भी आदमी दूसरे एक आदमी को किसी और की सहायता बिना पूरी तरह काबू नहीं कर स चाहे वह कितना ही बलवान व्यक्ति क्यों न हो। असल है कि सोहनलाल ने उस स्वार्थान्ध जमादार के

भी शारीरिक बल का प्रयोग नहीं किया। इस प्रकार अंग्रेजों के पंजे में पकड़ने का अर्थ उन के सामने खूब सुस्पष्ट था, इच्छा होती तो वे उस प्राणलोलुप जमादार के हाथ से रिवाल्वर की सहायता से पल भर में छुटकारा पा सकते थे। किन्तु न जाने भगवान ने उन के मन को उस घड़ी किस दिव्य लोक में भेज दिया था—वे मानो उस दिन इस संसार में एक दम थे ही नहीं।

सोहनलाल जेल में डाले गये सही, किन्तु जेल के किसी नियम का पालन वे न करते थे। जेल के अधिकारी जेल के परिदर्शन के लिए आते तो सारे कैदी जिस प्रकार आईन के मुताबिक उन को सम्मान दिखलाते हैं सोहन लाल वैसा न करते। वे कहते—'मैं अंग्रेजों के राजत्व को ही जब अन्याय और अत्याचार मानता हूं तब अंग्रेजों की जेल के नियमों का ही क्यों कर पालन करूं ?'' जेल सुपरिन्टेन्डेन्ट अथवा जेलर के सन्मुख आते तो वे और सब की तरह सम्मान के लिए न खड़े न होते; इसी से जब बर्मा के लाट साहेब सोहनलाल [illegible] आने के ठीक बाद ही जेल का परिदर्शन करने आये [illegible] साहब ने अत्यन्त सङ्कोच के साथ सोहनलाल से [illegible] कि वे कम से कम लाट साहेब को तो सम्मान

सार्थकता नहीं है यही बात उन्हें समझाने लगे। यदि प्राण देने ही हों तो स्वदेश और स्वधर्म के लिए प्राण देने का कितना महान् गौरव है सो भी सिपाहियों को समझाने लगे। सिपाहियों के द्वारा भले ही उन का कोई अनिष्ट न हुआ, किन्तु सिपाहियों के एक जमादार ने एक दिन सोहनलाल को पकड़ लिया। उस दिन उस जगह उस जमादार और सोहनलाल के सिवाय और कोई नहीं था। सोहनलाल के जामे की पाकेट में तब दो तीन रिवाल्वर और भरपूर गोलियां भी थीं, किन्तु क्या जाने सोहनलाल उस घड़ी किस स्वप्न की खुमारी में थे कि उस दिन रिवाल्वर की सहायता से उन्हों ने उस प्राणघाती जमादार के हाथ से मुक्ति पाने की कोई चेष्टा ही नहीं की। उस दिन ऐसी अवस्था में सोहनलाल के मुंह से केवल कुछ ऐसे ही शब्द निकले थे—"अरे भाई! तू मुझे पकड़ा देगा? तू क्या भूला जाता है कि मैं तेरा भाई हूं? भाई हो कर भाई को पकड़ा देगा? भाई को पकड़ा देने में तुझे क्या कुछ भी दर्द नहीं होता? अरे, तू कैसा भाई है, भाई हो कर भाई को पकड़ाए देता है?" लेकिन जमादार सोहनलाल को खींच ही ले चला। यह सच है कि सोहनलाल बहुत बलिष्ट न थे किन्तु यह बात भी सच है कि कोई भी आदमी दूसरे एक आदमी को किसी और की सहायता बिना पूरी तरह काबू नहीं कर सकता चाहे वह कितना ही बलवान व्यक्ति क्यों न हो। असल बात यह है कि सोहनलाल ने उस स्वार्थान्ध जमादार के ऊपर जरा

भी शारीरिक बल का प्रयोग नहीं किया। इस प्रकार अंग्रेजों के फन्दे में पकड़ने का अर्थ उन के सामने खूब सुस्पष्ट था, इच्छा होती तो वे उस प्राणलोलुप जमादार के हाथ से रिवाल्वर की सहायता से घड़ी भर में छुटकारा पा सकते थे। किन्तु न जाने भगवान् ने उन के मन को उस घड़ी किस दिव्य लोक में भेज दिया था—वे मानो उस दिन इस संसार में एक दम थे ही नहीं।

सोहनलाल जेल में डाले गये सही, किन्तु जेल के किसी नियम का पालन वे न करते थे। जेल के अधिकारी जेल के परिदर्शन के लिए आते तो सारे कैदी जिस प्रकार आईन के मुताबिक उन को सम्मान दिखलाते हैं सोहन लाल वैसा न करते। वे कहते—"मैं अंग्रेजों के राजत्व को ही जब अन्याय और अत्याचार मानता हूँ तब अंग्रेजों की जेल के नियमों का ही क्यों कर पालन करूं ?" जेल सुपरिन्टेन्डेन्ट अथवा जेलर उन के सन्मुख आते तो ये और सब की तरह सम्मान के लिए उठ कर खड़े न होते, इसी से जब बर्मा के लाट साहेब सोहनलाल के पकड़े जाने के ठीक बाद ही जेल का परिदर्शन करने आये तब जेलर साहब ने अत्यन्त सङ्कोच के साथ सोहनलाल से अनुरोध किया कि वे कम से कम लाट साहेब को तो सम्मान दिखायें, किन्तु वे इस पर सम्मत न हुए। किन्तु ऐसे निर्भीक और आत्ममर्यादा पर इस प्रकार सुप्रतिष्ठित होते हुए भी सोहनलाल मनुष्य के साथ मनुष्य की तरह व्यवहार करते

कभी किसी प्रकार की अभद्रता नहीं दिखाते थे। कोई उन के साथ बात करने आवे तो वे भद्रतापूर्वक यथोचित सम्मान कर के उस से बात करते। कोई उन के साथ खडा हो कर बात करे तो वे भी खडे हो कर बात करते। इसी से लाट साहेब के सोहनलाल के पास आने से ठीक पहले जेलर सोहन के पास आ कर खडे हो कर बात करने लगे। इसी लिए लाट साहेब के आने पर नये सिरे से उन्हे खडा नहीं होना पडा, और इस प्रकार जेलर ने अपनी और लाट साहेब की मर्यादा की उस बार रक्षा की।

लाट साहेब ने प्राय दो घटा सोहन लाल के साथ वार्तालाप किया। लाट साहेब ने सोहनलाल से बडा अनुरोध किया कि वे क्षमा माग लें, लाट साहब ने कहा कि वे केवल एक बार क्षमा की प्रार्थना कर दें, बस उन की प्राण दण्ड से रक्षा हो जायगी। सोहनलाल ने लाट साहब को भली प्रकार समझा कर कहा कि इस समय जो कुछ अन्याय या जोर जुल्म हो रहा है सब अंग्रेजों की तरफ से ही हो रहा है, अंग्रेजों ने केवल डडे के जोर से इस देश को दखल किया है और डडे के जोर से ही इस देश मे शासन कर रहे हैं, इस लिए क्षमा प्रार्थना यदि किसी को करनी चाहिए तो लाट साहेब को ही,—सोहनलाल ने यह सब बात लाट साहेब को समझानी चाही।

फासी होने के दिन जब सोहनलाल को फासी के तख्ते पर खडा किया गया तब भी एक अंग्रेज मैजिस्ट्रेट ने उन्हें फिर

एक बार समझाया कि अब भी यदि वे केवल मुँह से क्षमा प्रार्थना कर ले तो एकदम उन की प्राण दण्ड से रक्षा हो सकती है। इन अंग्रेज अधिकारी ने सोहन से कहा कि उन के पास आदेश आया है कि अन्तिम बार एक दफा फिर सोहन से क्षमा भिक्षा करने के लिए अनुरोध किया जाय। जीवन और मरण के सन्धिस्थल में खड़े सोहनलाल के मुँह की ओर जेल के कर्मचारी और राज्याधिकारी अवाक् हो कर ताक रहे थे। सोहनलाल धीरे धीरे मुस्कराने लगे और अनायास ही बोले—"क्षमा मागनी हो तो अंग्रेज हम से क्षमा मागें, मैं किस खातिर तुम्हारे पास क्षमा मागने आऊगा?" अंग्रेज राज्याधिकारी ने फिर भी सोहन से बड़ा अनुरोध किया, अनेक प्रकार समझाया कि वृथा प्राण दे कर कुछ लाभ नहीं होगा, अन्त में सोहनलाल कुछ सोच कर बोले—"देखो, यदि मुझे बिलकुल छोड़ दो और मैं यदि इच्छानुसार चला जा सकू तो क्षमा प्रार्थना करने को प्रस्तुत हू।" अंग्रेज राज्याधिकारी ने दु खित हो कर कहा, वैसा कोई अधिकार उन के हाथ में नहीं है। सोहनलाल ने कहा—"तो और जरा भी देर न करो, अपने कर्त्तव्य का पालन करो, और मुझे भी अपना कर्त्तव्य पूरा करने दो।"

सोहनलाल को फासी हो गई।

बर्मा के मुसलमान विप्लववादियों ने फिर बकरीद के समय विप्लव का आयोजन किया। किन्तु आयोजन पूरा न होने से विप्लव का दिन २५ डिसम्बर तक हटा दिया गया। बर्मा की

सोहनलाल पाठक

क्षमा माँगनी है तो जर्मन हमसे माँगे।
(पृष्ठ १०१)

जगतसिंह

सिक्खों में भी उन तैराकार जगतसिंह के मुकाबले का कोई न था। (पृष्ठ ७)

एक बार समझाया कि अब भी यदि वे केवल मुँह से क्षमा प्रार्थना कर लें तो एकदम उन की प्राण दण्ड से रक्षा हो सकती है। इन अंग्रेज अधिकारी ने मोहन से कहा कि उन के पास आदेश आया है कि अन्तिम बार एक दफा फिर सोहन से क्षमा भिक्षा करने के लिए अनुरोध किया जाय। जीवन और मरण के सन्धिस्थल में खड़े सोहनलाल के मुँह की ओर जेल के कर्मचारी और राज्याधिकारी अवाक् हो कर ताक रहे थे। सोहनलाल धीरे धीरे मुस्कराने लगे और अनायास ही बोले—"क्षमा मागनी हो तो अंग्रेज हम से क्षमा मागें, मैं किस खातिर तुम्हारे पास क्षमा मागने आऊगा ?" अंग्रेज राज्याधिकारी ने फिर भी मोहन से बड़ा अनुरोध किया, अनेक प्रकार समझाया कि वृथा प्राण दे कर कुछ लाभ नहीं होगा, अन्त में सोहनलाल कुछ सोच कर बोले--"देखो, यदि मुझे बिलकुल छोड़ दो और मैं यदि इच्छानुसार चला जा सकू तो क्षमा प्रार्थना करने को प्रस्तुत हू ।" अंग्रेज राज्याधिकारी ने दुःखित हो कर कहा, वैसा कोई अधिकार उन के हाथ में नहीं है। सोहनलाल ने कहा—"तो और जरा भी देर न करो, अपने कर्त्तव्य का पालन करो, और मुझे भी अपना कर्त्तव्य पूरा करने दो ।"

सोहनलाल को फांसी हो गई।

वर्मा के मुसलमान विप्लववादियों ने फिर बकरीद के समय विप्लव का आयोजन किया। किन्तु आयोजन पूरा न होने से विप्लव का दिन २५ दिसम्बर तक हटा दिया गया। वर्मा की

मिलिटरी पुलिस की एक बारक में रिवाल्वर, डिनामाइट् आदि बहुत सी चीजें पकड़ी गई, और उस के बाद बर्मा के सब सन्देहजनक व्यक्तियों को डिफेंस आफ इन्डिया ऐक्ट के अनुसार नज़र बन्द कर डाला गया। उस के बाद बर्मा में कोई उपद्रव नहीं हुआ।

छठा परिच्छेद

परिणाम

विप्लवियों की सभी चेष्टायें बार बार व्यर्थ हुई, उस का फल यह हुआ कि स्वदेश में और विदेश में भिन्न भिन्न राजशक्तियों की चक्की में पिसते हुए उन की लाञ्छनाओं की अवधि न रही। स्वदेश की तो बात ही नहीं, विदेश में भी वे एक देश से दूसरे देश को मारे मारे फिरने लगे और स्वदेश में 'भारत-रक्षा आर्डिन'' के जोर पर जरा सा सन्देह होते ही दल के दल युवकों को जेलों में या गाँवों की नजरबन्दी में ठेल दिया जाता। जिन के विरुद्ध तनिक सा भी प्रमाण पाया गया, उन्हें अंग्रेज़ सरकार के हाथ कठोर दण्ड भोगना पड़ा। कइयों ने फांसी के रस्ते पर जीवन दिया, कइयों को कालापानी हुआ। पुलिस का उत्पात या जेल की कठोरता न सह सकने पर कई युवकों ने आत्महत्या का आश्रय लिया, इन सब करुण कथाओं ने कितने ही तरुण युवकों की माताओं के दिल निष्ठुरता से टुकड़े टुकड़े कर डाले। विप्लवदल प्राय छिन्न भिन्न हो गया। विप्लवियों के नेता या तो जेल में डाले गये, या फाँसी के रस्ते पर चढ़े। विप्लवदल जब इस प्रकार छिन्न भिन्न हो कर

देश के चारों ओर बिखर गया तब अनेक स्थानों पर पुलिस के साथ उन के जो सब सघर्ष हुए विप्लव-युग के इतिहास में वे स्मरणीय रहेंगे।

पंजाब के विप्लवान्दोलन की गम्भीरता और व्यापकता जब प्रकट हो गई तब गवर्न्मेंट जान गई कि इस विप्लवदल की अब किसी प्रकार अवहेलना करने से काम न चलेगा। भारत के प्रवीण विज्ञ और राजनीतिविशारद नेता लोग देर से यह बात कहते आते थे कि भारत का यह विप्लव-प्रयास बिल्कुल लडकपन है,—किन्तु अग्रेज गवर्न्मेंट यह बात अच्छी तरह जान गई थी कि इन विप्लवियो को यदि कुछ दिन भी निर्विघ्न रूप मे अपने मतलब के अनुसार काम करने का अवसर और सुयोग मिल जाय तो भारत की अवस्था मे सचमुच एक अभूतपूर्व परिवर्त्तन हो जायगा। भारतीय विप्लववादियों के लिए क्या कुछ कर डालना सम्भव है इस की अग्रेज गवर्न्मेंट ...ी कल्पना करती थी, भारत के राजनीतिज्ञ नेताओं ने ... कल्पना कभी नही की। अन्दमान जाने से पहले कुछ एक अग्रेज अधिकारियो के साथ मेरी इस विषय मे अनेक बातचीत हुआ करती थी। इन की बातचीत से मैं समझ... था कि गवर्न्मेंट भारत के भिन्न भिन्न आन्दोलनों में से... ...त्र विप्लवान्दोलन को चिन्ता करने लायक इसी से इस गवर्न्मेंट में जो कुछ जहर था इन्हीं पर उस का प्रयोग किया गया। इसी से ५

आन्दोलन का पता लगते ही भारत सरकार ने भारत के मंगल के लिए "भारत-रक्षा आईन" के समान अत्यन्त कठोर शासन-प्रणाली जारी कर दी।

इतिहास में जो चिरकाल से होता आता है भारत की बारी में भी इस से उल्टा नहीं हुआ। जब कोई पराधीन जाति जागने लगती है तब उस जागरण को व्यर्थ करने के लिए ऐसी ही कठोर शासन नीति जारी की जाती है। किन्तु जाति जब सचमुच जाग उठती है तब संसार की कोई भी कठोर नीति उस जागरण को व्यर्थ नहीं कर सकती, वरन् इस तरह की कठोर दमन नीति के द्वारा जाति की केवल शक्ति-परीक्षा होती है। जाति में यदि सचमुच कुछ प्राणों की शक्ति ... तब कठोरता जागृति की रुकावट न हो कर ... जाती है। इसी से जागरण के दिन राजकोप को ... प न समझ कर भगवान् का अनुग्रह समझना ... भारत के विप्लवियों ने भी सचमुच कभी भी ... के लिए अंग्रेजों को दोषी नहीं ठहराया, ... इन कठोरताओं में से ... करने के लिए ... का स्वार्थो- ... ही सार्थक ... के पत्थर ... प्राप्ति के

देश के चारों ओर बिखर गया तब अनेक स्थानो पर पुलि
के साथ उन के जो सब संघर्ष हुए विप्लव-युग के इतिहास
वे स्मरणीय रहेंगे।

पंजाब के विप्लवान्दोलन की गम्भीरता और व्यापक
जब प्रकट हो गई तब गवर्न्मेंट जान गई कि इस विप्लवद
की अब किसी प्रकार अवहेलना करने से काम न चलेगा
भारत के प्रवीण विज्ञ और राजनीतिविशारद नेता लोग दे
से यह बात कहते आते थे कि भारत का यह विप्लव-प्रया
बिल्कुल लडकपन है,—किन्तु अंग्रेज गवर्न्मेंट यह बात अच्छ
तरह जान गई थी कि इन विप्लवियो को यदि कुछ दिन भ
निर्विघ्न रूप से अपने मतलब के अनुसार काम करने का अवस
और सुयोग मिल जाय तो भारत की अवस्था मे सचमुच
एक अभूतपूर्व परिवर्त्तन हो जायगा। भारतीय विप्लववादियों
के लिए क्या कुछ कर डालना सम्भव है इस की अंग्रेज़ गवर्न्मेंट
जैसी कल्पना करती थी, भारत के राजनीतिज्ञ नेताओ ने
वैसी कल्पना कभी नही की। अन्दमान जाने से पहले कुछ एक
ऊंचे अंग्रेज अधिकारियों के साथ मेरी इस विषय मे अनेक
बार बातचीत हुआ करती थी। इन की बातचीत से मै समझ
पाया था कि गवर्न्मेंट भारत के भिन्न भिन्न आन्दोलनो में से एक
मात्र विप्लवान्दोलन को चिन्ता करने लायक गिनती थी,
इसी से इस गवर्न्मेंट में जो कुछ जहर था इन्हीं विप्लवियों
पर उस का प्रयोग किया गया। इसी से पंजाब के विप्लव

कर दिया । वहा १५ सिपाही १५ मैगजीन राइफले और प्राय ७५० कारतूम थे। ७-८ पिस्तौल धारी विप्लवी ७५० कारतूस समेत १५ की १५ राइफलें छीन ले गये। किन्तु उस समय दल की कुछ अच्छी विधि व्यवस्था न रहने से थोडे दिनों मे ही बन्दूकों समेत ५ विप्लवी पकडे गये। इन पाचों को फासी हुई। इस से पहले ही २८ जनों को फासी हो चुकी थी। इन्हें फासी लगने के बाद भी फिर से कुछ सिक्ख स्कूल-मास्टरो ने मिल कर विप्लव की धारा को अक्षुण्ण रखने की चेष्टा की, सम्भवत उस का सिलसिला आज भी चलता होगा । डा० मथुरासिंह आदि कई विप्लवी भारत त्यागने के बाद अफगानिस्तान में से हो कर फारिस मे और मेसोपोटा-मिया की भारतीय सेनाओं में विप्लव की बातो का प्रचार करते रहे। एक बार घटनाक्रम से डा० मथुरासिंह भारत और अफगानिस्तान के सीमान्त प्रदेश में पकडे गये । उन्हें भी फासी हुई। जो इस प्रकार फासी और कालापानी से बच पाये उन में से अनेकों को इन्टर्नमेंट (नजरबन्दी) भोगनी पडी उस युग में बगाल और पजाब जितनी इन्टर्नमेंट और किसी प्रान्त में नहीं हुई, और कालापानी और फासी उस बार पजाब मे ही और सब प्रान्तों की अपेक्षा अधिक हुई ।

युक्त प्रदेश में भी बनारस-षड्यन्त्र मामले के बाद मैन-पुरी को केन्द्र बना कर प्राय एक बरस भर में ही फिर एक बडा विप्लवदल उठ खडा हुआ । इस विप्लवदल की बात

पथ में कितनी आगे वढी है यह सव दमन नीति ही मानो उस का परिचय देती है, भारतीय विप्लववादी यही विश्वास करते थे। इसी विश्वास के कारण वे सव दु ख-लाञ्छनायें प्रफुल्ल वदन से सह सके, प्राणों के वलिदान से ही जाति में प्राणों का सञ्चार होता है, इसी विश्वास से वे प्राणों की वलि देने से भी घवराते न थे।

डिफेंस आफ इण्डिया ऐक्ट जारी होने के बाद से समरी ट्रायल्स (सक्षिप्त मुकद्दमे) आरम्भ हो गये। वारी वारी पंजाव मे तीन षड्यन्त्र-मामलों का विचार हुआ। प्रत्येक मामले में ६०-७० आसामी थे। इन सव मुकद्दमों के फलस्वरूप पजाव में एक साथ २८ जनों को फासी हुई। मेरठ पल्टन मे ११ जनो को फासी हुई, सातवीं राजपूत सेना में से कई जनों को सम्भवत दिल्ली में फासी हुई। जिन्हें फासी न हुई, उन्हें प्राय सभी को कालापानी हुआ। ऐसी अवस्था के वाद भी पजाव के वचे हुए विप्लवियों के वीच फिर विप्लव की योजना चलने लगी। कुछ अकाली दल इन सव कैदी विप्लवियो को जेल से छुडाने के इरादे वॉधने लगे। सिक्खों के एक और दल ने अस्त्र-सग्रह की ओर ध्यान दिया। उन दिनो बडे बडे रेलवे स्टेशनो पर और वडे वडे पुलों के नीचे हथियारवन्द सिपाहियो का पहरा रहता था। एक वार विप्लवियों के एक छोटे से दल ने, जान पडता है केवल ७-८ जनो ने मिल कर अमृतसर के पुल के सिपाहियों पर एकाएक हमला

अपने नियन्त्रण के अधीन हो उस को भूल चूक के लिए दायित्व लिया जा सकता है, और उस अवस्था मे भूल चूक पकडना और उस का सशोधन करना भी अपनी ताकत मे होता है। किन्तु जिस दल की विधि-व्यवस्था के उपर अपना कोई हाथ नहीं उस की भूलचूक पकडने का सुयोग कहा होता है? यह सच था कि बगाल के बहुत से क्षुद्र क्षुद्र दल यतीन बाबू के नेतृत्व के अधीन सम्मिलित हो गये थे, किन्तु वे पूर्व बगाल की अनुशीलन समिति के साथ अथवा चन्दननगर के विप्लवियो के अर्थात् रासविहारी के साथ सम्मिलित न हुए थे, और न होने की कोई चेष्टा ही करते थे, जापान जाने से पहले रासबिहारी ने उन के साथ भेंट करने की बहुत चेष्टा की, किन्तु जिस किसी कारण से हो, भेंट न हो सकी। खैर जो भी हो, जब यतीन बाबू के काशी आने की बात चली तब हम ने सब तरफ देख भाल कर उन्हे काशी में रखने का भार लेना स्वीकार कर लिया, किन्तु क्या जाने क्यो उन्हों ने खुद ही काशी न आना ही तय किया।

उस समय भी यतीन बाबू कलकत्ता छोड कर गये नहीं। एक दिन वे अपने पाथुरियाघाटा वाले एक मकान पर आये हुए थे। वहा और भी कई फरार विप्लवी थे। उस समय उसी घर में घटनाक्रम से थोडे दिनों का परिचित एक आदमी आ उपस्थित हुआ। इस आदमी पर वे गुप्तचर होने का सन्देह करते थे, इसी से भली प्रकार आगे पीछे देखभाल करने से

भी प्राय दो एक बरस के बीच ही प्रकाशित हो गई। इस प्रसङ्ग में एक बात कह देना चाहता हू; रूस मे प्राय कोई भी विप्लवी दो मास से अधिक समय तक अप्रकाशित रूप मे काम न कर पाते थे। दो महीने के अन्दर ही या तो वे राज्य से दण्ड पा जाते थे, या उन्हे देश छोड कर विदेश का आश्रय लेना पडता था। भारतवर्ष में अब तक प्राय देखा गया है कि यहा के विप्लवियों का कार्यकलाप और उन का परिचय दो बरस से अधिक समय गुप्त नहीं रह पाता।

बगाल मे उस समय फासी और कालापानी की अपेक्षा नजरबन्दी ही अधिक हुई। इन नजरबन्दियों के कारण बगाल का विप्लवदल बहुत कुछ टूट गया, तब यह विप्लवदल भिन्न भिन्न भागों में बँट कर देश भर में बिखर गया। उस समय यदि विप्लवियों के हाथ में उपयुक्त परिमाण में अस्त्र शस्त्र रहते तो वे सरकार का राज्य चलाना असम्भव कर डाल सकते थे।

उस समय तक रासबिहारी काशी मे ही थे। एक दिन केन्द्र से सबाद आया कि बगाल के प्रसिद्ध विप्लवनेता श्रीयुत यतीन्द्रनाथ मुखोपाध्याय को अज्ञातवास में रहना होगा, और उन्हो ने काशी में आ कर रहने की इच्छा प्रकट की है। हम ने परामर्श कर के देखा कि उन्हे काशी में छिपाके रखना कुछ ऐसी कठिन बात नहीं है, किन्तु हम ने यह भी देखा कि काशी के बाहर उन के दल के भूल चूक के कारण काशी पर भी विपत्ति आ सकती है। जिस दल की प्रत्येक विधि-व्यवस्था

अन्त में उन की इच्छानुसार ही व्यवस्था हो गई, जिस से वे लोग पाच जने बालेश्वर के निकट एक अड्डा बना कर रहने लगे। इधर विप्लवान्दोलन भी बन्द नहीं हुआ। दूर बालेश्वर में रहते हुए भी यतीन बाबू विप्लव कार्य की परिचालना करते थे। यदि विप्लवी लोग उधर भाग कर फिर से विप्लव के कार्य मे ध्यान न देकर निश्चेष्ट हो कर केवल अपने को गुप्त रखने का ही ख्याल रखते तो मालूम होता है कोई भी विप्लवी पकडे न जाते। विप्लवी लोग अपने को गुप्त रख कर भी बराबर विप्लव कार्य में लिप्त रहते थे इसी कारण वे बार बार विपत्ति में पडते थे। किन्तु केवल प्राण बचाना ही तो विप्लवियो का उद्देश्य न था। जीवन यदि देश के काम में न लगा तो जीवन बना रहने से क्या बनेगा, यही थी विप्लवियो की धारणा उधर पूर्व परिच्छेद में उल्लिखित उसी बगकोक के वकील ने जब विप्लवायोजन के सब सवाद सरकार के पास खोल दिये तब उसी सिलसिले में कलकत्ते मे और कुछ धरपकड हुई। इसी सूत्र मे फिर यतीन्द्रनाथ के अड्डे का संवाद भी पुलिस को मिल गया। यतीन्द्र नाथ को भी पता लग गया कि पुलिस को उन का सूराग मिल गया है। वे चाहते तो उसी समय भाग सकते थे, पर तुच्छ प्राणों के डर से यतीन्द्रनाथ भागना न जानते थे। उद्देश्यसिद्धि के लिए यदि उन्हे दूसरी जगह जाना होता तब भी वे अपने साथियो को छोड कर भागने को राजी न थे। वे अपने साथियो के जीवन और अपने जीवन मे कोई भेद

पहले ही विप्लवियो मे से एक ने इस थोडे दिन के परिचित आदमी को देखते ही गोली दाग दी। सुविधा होती तो यतीन बाबू को गवर्न्मेंट निश्चय से पकड लेती । यतीन बाबू को बचाने की खातिर ही सम्भवत इन युवक ने इस प्रकार गोली दाग दी थी । यह बात सच है कि यतीन बाबू ने गोली नहीं मारी किन्तु इस व्यक्ति ने डाइंग् डिक्लेरेशन (मरते समय के इजहार) में यतीन बाबू के नाम पर ही गोली मारने का अभियोग लगा दिया । इस प्रकार यतीन बाबू के नाम पर फासी का परवाना लटकने लगा । जब उस व्यक्ति को गोली ही मारनी थी तब फिर डाइग डिक्लेरेशन देने का सुयोग क्यों दिया गया सो कह नहीं सकता ।

लाचार यतीन बाबू को दूसरी जगह जाना पडा। यतीन बाबू के लिए एक निरापद स्थान ठीक हुआ, वहा जाने का समय आया तो यतीन्द्रनाथ अपने साथियों से कह उठे "जब तक मैं भली भान्ति न जान लू कि तुम ने और सब के लिए भी ऐसे ही निरापद स्थान ठीक कर रक्खे हैं जैसा मेरे लिए किया है, तब तक मैं तुम्हारा यह बन्दोबस्त मान नहीं सकूगा, हम सब बरखास्त किये हुए सिपाही हैं, हर घडी मृत्यु का आदेश सुनने की प्रतीक्षा में हैं, इसी लिए सभी एक सग रहना चाहते हैं, जिस से एक effective struggle (प्रभावशाली मुठभेड) की जा सके which will create a moral impression जिससे जनता पर एक नैतिक प्रभाव हो सके।

ধনগোপাল মুখোপাধ্যায়

देखते थे। इसी से तय हुआ कि सभी एक संग ही जायेंगे। फिन्तु उन के साथियों में से दो उस समय बारह मील दूर घने जगल में थे। उन को किसी प्रकार भी छोड कर जाना नहीं हो सकता। यतीन्द्रनाथ अपने दूसरे संगियो को ले अन्धेरी रात में पहाडी रास्ते से जंगल के बीचों बीच अपने साथियों को लाने के लिए चल पडे। अपरिचित रास्ते पर बारह मील रास्ता तय कर के फिर बारह मील वापिस आ कर दूसरी जगह जाना असम्भव था। तब भी यतीन्द्रनाथ का हृदय इसे असम्भव कह के रह नहीं सकता था। असाध्यसाधन ही उन के जीवन का व्रत था—उस दिन भी उस असाध्य साधन मे ही वे अग्रसर हुए। लौटते हुए रात बीत गई उस समय जगल के साथ साथ गाँवों के पडोस में नदी के किनारे किनारे चौकिया बैठ गई थीं। किन्तु इतना आयोजन होने पर भी वे बस्ती में घुस कर बालेश्वर की ओर भाग चले। उन के साथ चित्तप्रिय मनोरञ्जन, नीरेन्द्र और ज्योतिष ये चार युवक थे। उस समय सवेरा हो गया था, गाँव के लोगों को पुलिस ने समझा दिया था कि एक भयकर डकैतो का दल उन के इलाके में छिपा हुआ है, उन्हें पकडने अथवा पकडा देने पर यथेष्ट पुरस्कार दिया जायगा। पिछले दो दिन यतीन्द्रनाथ को खाना या सोना कुछ नसीब नहीं हुआ। दिन दोपहर की धूप में उन्हे फिर भी ग्राम, नदी, नाले पार कर के चलना पड रहा था। राह में एक नदी पार होते समय माझी को कहा कि सारा

त उन्हें कुछ खाने को नहीं मिला, थोड़ा सा भात राँध दे तो
त के प्राण बचें, किन्तु हिन्दू माझी अपने जन्म-जन्मान्तरों के
संस्कारों की रक्षा में ही व्यस्त रहा, ब्राह्मण की प्राणरक्षा हो
या न हो, ब्राह्मण को भोजन करा के वह नरक जाने को प्रस्तुत
था, वह नीच जात का हो कर ब्राह्मणों को किसी प्रकार
भात राँध कर न दे सकता था, इसी कारण भात राँधने को
हाँडी भी न दे सकता था। इधर पुलिस को भी सन्धान मिल
गया कि यतीन्द्रनाथ अमुक गाव में से गुजर कर गये हैं।
यतीन्द्रनाथ के पीछे पीछे सशस्त्र पुलिस दल छूट पड़ा। इस प्रदेश
में यदि विप्लवियों का आर्गनिजेशन (सगठन) रहा होता तो उस
विपत्ति में भी वे रक्षा पा सकते। किन्तु आर्गनिजेशन न रहने
से उन्हें क्रमशः एक गाव से दूसरे गाव भागना पड़ा इस
प्रकार सन्ध्या के बाद बालेश्वर के निकट एक जगल में आ
उपस्थित हुए। उस समय जिले के मैजिस्ट्रेट और जिले के
सुपरिन्टेन्डेन्ट, आर्म्ड (सशस्त्र) पुलिस सर्चलाइट (Search
light) इत्यादि खण्डयुद्ध (skirmish) का सब सरञ्जाम
साथ ले कर यतीन्द्रनाथ के पीछे दौड़ते आते थे। यतीन्द्रनाथ
दल सहित आगे आगे जा रहे थे, और पीछे पुलिस दल दो भागों
में बँट कर जगल के दोनों बाजू सर्चलाइट छोड़ते हुए क्रमशः
एक दूसरे के नजदीक होते हुए यतीन्द्रनाथ का पीछा कर रहा
था। इस प्रकार जगल में से खिसक जाना यतीन्द्रनाथ के लिए
सम्भव न रहा। भोर भी हो गई। अब और निस्तार नहीं—

दिन उन्हें कुछ खाने को नहीं मिला, थोडा सा भात रॉंध दे तो उन के प्राण बचें, किन्तु हिन्दू माझी अपने जन्म-जन्मान्तरों के सस्कारों की रक्षा में ही व्यस्त रहा, ब्राह्मण की प्राणरक्षा हो या न हो, ब्राह्मण को भोजन करा के वह नरक जाने को प्रस्तुत न था, वह नीच जात का हो कर ब्राह्मणो को किसी प्रकार भात रॉंध कर न दे सकता था, इसी कारण भात रॉंधने की हाडी भी न दे सकता था। इधर पुलिस को भी सन्धान मिल गया कि यतीन्द्रनाथ अमुक गाव में से गुजर कर गये हैं। यतीन्द्रनाथ के पीछे पीछे सशस्त्र पुलिस दल छूट पडा। इस प्रदेश में यदि विप्लवियों का आर्गनिजेशन (सगठन) रहा होता तो उस विपत्ति में भी वे रक्षा पा सकते। किन्तु आर्गनिजेशन न रहने से उन्हें क्रमश एक गाव से दूसरे गाव भागना पडा इस प्रकार सन्ध्या के बाद बालेश्वर के निकट एक जगल में आ उपस्थित हुए। उस समय जिले के मैजिस्ट्रेट और जिले के सुपरिन्टेन्डेन्ट, आर्म्ड (सशस्त्र) पुलिस सर्चलाइट (Search light) इत्यादि खण्डयुद्ध (skirmish) का सब सरञ्जाम संग ले कर यतीन्द्रनाथ के पीछे दौड़ते आते थे। यतीन्द्रनाथ दल सहित आगे आगे जा रहे थे, और पीछे पुलिस दल दो भागों में बँट कर जगल के दोनों बाजू सर्चलाइट छोड़ते हुए क्रमश एक दूसरे के नजदीक होते हुए यतीन्द्रनाथ का पीछा कर रहा था। इस प्रकार जगल में से खिसक जाना यतीन्द्रनाथ के लिए सम्भव न रहा। भोर भी हो गई। अब और निस्तार नहीं—

दिन उन्हें कुछ खाने को नहीं मिला, थोड़ा सा भात राँध दे तो उन के प्राण बचें, किन्तु हिन्दू मासी अपने जन्म-जन्मान्तरों के सस्कारों की रक्षा में ही व्यस्त रहा, ब्राह्मण की प्राणरक्षा हो या न हो, ब्राह्मण को भोजन करा के वह नरक जाने को प्रस्तुत न था, वह नीच जात का हो कर ब्राह्मणों को किसी प्रकार भात राँध कर न दे सकता था, इसी कारण भात राँधने की हाडी भी न दे सकता था। इधर पुलिस को भी सन्धान मिल गया कि यतीन्द्रनाथ अमुक गाव में से गुजर कर गये हैं। यतीन्द्रनाथ के पीछे पीछे सशस्त्र पुलिस दल छूट पडा। इस प्रदेश में यदि विप्लवियों का आर्गनिजेशन (सगठन) रहा होता तो उस विपत्ति में भी वे रक्षा पा सकते। किन्तु आर्गनिजेशन न रहने से उन्हें क्रमश. एक गाव से दूसरे गाव भागना पडा इस प्रकार सन्ध्या के बाद बालेश्वर के निकट एक जगल में आ उपस्थित हुए। उस समय जिले के मैजिस्ट्रेट और जिले के सुपरिन्टेन्डेन्ट, आर्म्ड (सशस्त्र) पुलिस सर्चलाइट (Search light) इत्यादि खण्डयुद्ध (skirmish) का सब सरञ्जाम सँग ले कर यतीन्द्रनाथ के पीछे दौड़ते आते थे। यतीन्द्रनाथ दल सहित आगे आगे आ रहे थे, और पीछे पुलिस दल दो भागों में बँट कर जगल के दोनों बाजू सर्चलाइट छोड़ते हुए क्रमश एक दूसरे के नजदीक होते हुए यतीन्द्रनाथ का पीछा कर रहा था। इस प्रकार जगल मे से खिसक जाना यतीन्द्रनाथ के लिए सम्भव न रहा। भोर भी हो गई। अब और निस्तार नहीं—

पुलिस बहुत ही निकट थी। उस स
ने सजल नेत्रों से प्रार्थना की-वे
कपट वेष से दूसरी जगह निकल
यह प्रस्ताव नहीं माना। वे बोले-
करो, हम सब पिता-माता की
माया बन्धन, बन्धु-बान्धवों का प्य
शान्ति छोड़ कर आये हैं-एक स
न ? अब इस विपत्ति के समय व
मनुष्य तो अमर नहीं है। एक
होगा। तब कायरों की तरह मरने से

युद्ध करना ही तय पाया।
अधिक गाव वाले, डाकू पकड़े
हथियार बन्द पुलिस सेना का स
केवल पाच विप्लवी ! वे फिर जग

अनिद्रा और राह की मेह
से का चना चबेना खरीद
इतने में दोनो दलो ने ए
से गोली चली। पुलिस की अ
ज़रा अधिक आगे बढ़े, उ

भी धारा प्रवाह गोलियां बरसने लगीं। इस प्रकार प्रबल शत्रुओं के मुकाबले में थके-मादे, भूखे प्यासे पांच आदमी कब तक युद्ध कर पाते ? विप्लवियों की गोलियां भी खतम होने को आईं। वे सभी घायल हो गये थे। किन्तु घायल होने पर भी उन्हों ने हथियार नहीं रक्खे। इतने में एक घातक गोली आकर चित्तप्रिय को अमर धाम ले गई, और सब भी उस समय बुरी तरह घायल थे। यतीन्द्र नाथ उस समय साथियों से बोले "अब और शक्ति क्षय करने से कुछ लाभ न होगा, चित्तप्रिय गया, मैं भी बचूंगा नहीं, तुम अब वृथा प्राण न दो, शायद तुम फिर भविष्य में कुछ काम कर सको" किन्तु साथी लोग लड कर प्राण देना चाहते थे। पर यतीन्द्रनाथ उन के प्राण बचाना चाहते थे। अन्त में उन्हों ने यतीन्द्रनाथ के आग्रहपूर्ण अनुरोध से आत्मसमर्पण कर दिया। बहुत खून गिरने से यतीन्द्रनाथ का देह अवसन्न हो कर गिर पड़ा, प्यास से उन का गला सूख गया था। डूबती आवाज में उन्हों ने कहा—"पानी"। बालक मनोरञ्जन के देह से उस वक्त रक्तधारा बह रही थी। किन्तु नेता की इस अन्तिम आकांक्षा को पूर्ण करने के लिए वह उस समय भी पास के जलाशय से चादर भिगो कर पानी लाने के लिए [illegible] पड़ा। इस दृश्य से पुलिस के साहब भी पिघल गये। [illegible]ञ्जन को बैठने को कह कर कोई बर्तन न होने से अपनी [illegible] ही जल भर कर मरते आदमी के मुंह में डालने लगे।

पुलिस बहुत ही निकट थी। उस समय यतीन्द्र नाथ के साथियों ने सजल नेत्रों से प्रार्थना की-वे मरते हैं तो मरें, यतीन्द्रनाथ कपट वेष से दूसरी जगह निकल जाँय। किन्तु यतीन्द्रनाथ ने यह प्रस्ताव नहीं माना। वे बोले--"प्यारे भाई, देखो, विचार करो, हम सब पिता-माता की स्नेहमयी गोद, स्त्री पुत्रों का माया बन्धन, बन्धु-बान्धवों का प्यार-दुलार और घर की सुख-शान्ति छोड कर आये हैं-एक सग काम करेंगे यही कह कर न? अब इस विपत्ति के समय वह प्रण क्यों कर छोड दें? मनुष्य तो अमर नहीं है। एक न एक दिन उसे मरना ही होगा। तब कायरों की तरह मरने से लाभ क्या?"

युद्ध करना ही तय पाया। एक ओर प्राय हजार से अधिक गाव वाले, डाकू पकडे जा रहे हैं यह समझ कर हथियार बन्द पुलिस सेना का साथ दे रहे हैं—दूसरी ओर हैं केवल पाच विप्लवी! वे फिर जगल छोड कर गाव में आ घुसे। भूख, अनिद्रा और राह की मेहनत से वे सभी थके हारे थे। एक पैसे का चना चबेना खरीद कर खा लेने का भी चारा न था। इतने में दोनो दलों ने एक दूसरे को देख लिया, दोनों ओर से गोली चली। पुलिस की ओर के एक साहब विप्लवियों की ओर जरा अधिक आगे बढे, उसी समय चित्तप्रिय की एक गोली से उन की टोपी आसमान में उड गई। पुलिस के साहब फिर आगे न बढे। विप्लवी लोग ऊंची नीची जमीन पर लेट कर निशाना बाध कर गोली छोडने लगे। पुलिस की ओर से

भी धारा प्रवाह गोलिया बरसने लगीं । इस प्रकार प्रवल शत्रुओं के मुकाबले में थके-मांदे, भूखे प्यासे पाच आदमी कब तक युद्ध कर पाते ? विप्लवियों की गोलिया भी खतम होने को आईं । वे सभी घायल हो गये थे । किन्तु घायल होने पर भी उन्हो ने हथियार नहीं रक्खे । इतने मे एक घातक गोली आकर चित्तप्रिय को अमर धाम ले गई, और सब भी उस समय बुरी तरह घायल थे । यतीन्द्र नाथ उस समय साथियों से बोले "अब और शक्ति क्षय करने से कुछ लाभ न होगा, चित्तप्रिय गया, मैं भी बचूगा नहीं, तुम अब वृथा प्राण न दो, शायद तुम फिर भविष्य में कुछ काम कर सको" किन्तु साथी लोग लड कर प्राण देना चाहते थे । पर यतीन्द्रनाथ उन के प्राण बचाना चाहते थे । अन्त में उन्हों ने यतीन्द्रनाथ के आग्रहपूर्ण अनुरोध से आत्मसमर्पण कर दिया । बहुत खून गिरने से यतीन्द्रनाथ का देह अवसन्न हो कर गिर पडा, प्यास से उन का गला सूख गया था । डूबती आवाज में उन्हों ने कहा—'पानी" । बालक मनोरञ्जन के देह से उस वक्त रक्तधारा बह रही थी । किन्तु नेता की इस अन्तिम आकाक्षा को पूर्ण करने के लिए वह उस समय भी पास के जलाशय से चादर भिगो कर पानी लाने के लिए चल पडा । इस दृश्य से पुलिस के साहब भी पिघल गये । वे मनोरञ्जन को बैठने को कह कर कोई बर्त्तन न होने से अपनी टोपी में ही जल भर कर मरते आदमी के मुह में डालने लगे ।

गले मे पानी पहुचने पर यतीन्द्रनाथ के मुंह से बात निकली, उस समय स्निग्ध मधुर हसी हस कर वे साहब से बोले, "इस मामले मे मैं ही अकेला उत्तरदायी हू, इन--मेरे साथियों ने मेरे आदेश का ही पालन किया है।" यतीन्द्रनाथ ने कटक के अस्पताल में प्राण त्याग किया। मनोरञ्जन और नीरेन्द्र को फांसी हुई। ज्योतिष को आजन्म कालापानी की सज़ा मिली। यही ज्योतिषचन्द्र बच गये थे, इसी से उन के पास से यह सब सवाद पा कर आज हम देशवासियों को दे सके हैं। अन्दमान जेल में नानारूप निर्यातनों को सह न सकने से ज्योतिषचन्द्र वहीं पागल हो गये थे। आज कल सुना है वे बहरामपुर के पागलखाने में रहते हैं।*

मृत्यु की गोद में बैठे हुए, कटक के फासी घर के अंधेरे कोने से मनोरञ्जन और नीरेन्द्र ने जो अन्तिम चिट्ठी कलकत्ते भेजी थी, वह अतीत की स्वप्नमय कहानी प्रकाशित करते हुए छाती में कैसे कैसे स्पन्दन अनुभव होते हैं। उन्हों ने लिखा था—

"चित्तप्रिय और दादा (भैया) चले गये, हम भी जाते हैं। आशा है आप लोग पहले की तरह काम चलायेंगे। भगवान् आप लोगों को सफलता दान करेंगे। आज हमारे जीवन की विजया

---

* पीछे फारवर्ड में छपा था कि ज्योतिषचन्द्र पाल बहरामपुर के पागलखाने में स्वर्गवासी हो गये।

दशमी है। अलविदा। अलविदा। जो चले गये उन्हें लौटा लाने का कोई उपाय नहीं। किन्तु ज्योतिष की मुक्ति के लिए क्या करना चाहिए सो उन के स्वदेशवासी ही निश्चय कर सकेंगे।"

इस चिट्ठी के प्रसङ्ग से एक और चिट्ठी की बात याद आ गई जैनधर्मावलम्बी होते हुए भी उन्हों ने कर्तव्य की खातिर देश के मङ्गल के लिए सशस्त्र विप्लव का मार्ग पकड़ा था। 'निमेज' † के खून के अपराध में वे भी जब फांसी की कोठरी में कैद थे, तब उन्हों ने भी जीवन-मरण के वैसे ही सन्धिस्थल से अपने विप्लव के साथियों के पास जो पत्र भेजा था, उस का सार कुछ ऐसा था—"भाई मरने से डरे नहीं, और जीवन की भी कोई साध नहीं है, भगवान् जब जहा जैसी अवस्था में रक्खेंगे वैसे ही अवस्था में सन्तुष्ट रहेंगे'। न दो युवकों में से एक का नाम था मोतीचन्द और दूसरे का नाम था मणिकचन्द या जयचन्द।

इन सब विप्लवियों के मन के तार ऐसे ऊचे सुर में बधे जो प्रायः साधु और फकीरों के बीच ही पाया जाता है। इन सब विप्लवियों के जो प्रतिपक्षी थे, वे अंग्रेज भी अनेक बार दिल खोल कर इन की प्रशसा किये बिना नहीं रह सके। उस जमाने के खुफिया विभाग के सर्वेसर्वा, आज कल कलकत्ता

---

† निमेज के महन्त का बध सन् १६११ में हुआ था। रौलट कमिटी रिपोर्ट के बिहार-उड़ीसा प्रकरण (आठवें अध्याय) में इस का उल्लेख है।

के पुलिस कमिश्नर मि० टेगार्ट ने, सुनते हैं, परलोकगत प्रतिष्ठित बैरिस्टर मि० जे एन राय को यतीन्द्रनाथ के सम्बन्ध में कहा था, "Though I had to do my duties I have great admiration for him He was the only Bengali who died in an open fight from a trench." (यद्यपि मुझे अपना कर्त्तव्य पालना पडा, पर मेरे दिल में उस के लिए बडा आदर है। वह एक मात्र बंगाली था जो एक खुली लडाई में खन्दक से लडता हुआ मारा गया।)" किन्तु टेगार्ट साहब ने जिस समय यह बात कही थी उस के बाद और भी अनेक बंगाली ऐसी ही खुली लडाई में काम आये उन का भी थोडा सा परिचय पाठकों को देता हू।

९ सितम्बर सन् १९१५ को यतीन बाबू और उन के साथियो ने खुली लडाई में प्राण दिए। किन्तु उस के बाद भी प्राय १९१८ तक विप्लवियो के अस्तित्व का परिचय विशेष रूप से मिलता रहा। सन् १९१६ के अन्तिम भाग में खुफिया विभाग के डिप्टी सुपरिन्टेन्डेन्ट बसन्तकुमार चट्टोपाध्याय पर, जो इस से पहले दो बार आश्चर्यमय तरीकों से बच गये थे, तीसरी बार विप्लवियों ने हाथ साफ किया। सन् १९१७ में गौहाटी में विप्लवियों के साथ पुलिस का खण्डयुद्ध (Skirmish) हुआ, और सन् १९१८ में ढाका मे फिर पुलिस के साथ विप्लवियों का सशस्त्र मुकाबला हुआ जिस में विप्लवियों के दो जने खेत रहे। पाबना में भी एक छोटी मोटी मुठभेड हुई, इस

सब के अलावा खून डकैती तो जारी ही थी । इन सब
मुठभेड़ों का थोड़ा बहुत परिचय यहा देते हैं। सम्भवत
१९१६ में विप्लव दल की ओर से बिहार में विप्लववा
प्रचार करने को वीरभूम के नलिनी वाक्चि भागलपु
कालेज में पढने भेजे गए। कुछ ही दिन में इस बगाल
पुलिस की नजर पड गई। नलिनी पढना छोड कर फ़रा
गये। नलिनी छात्रवृत्ति पाने वाले अच्छे विद्यार्थी थे, पर
वृत्ति के झमट में कौन पडे? नलिनी एक दम खालिस
बन कर बिहार के शहर शहर में घूमने लगे। कुछ
बाद फिर पुलिस की नजर में पडे । नलिनी बगाल आये,
था सन् १९१७, बगाल के उस समय बुरे हाल और
बिहाडे थे—चारों ओर थी धरपकड, खानातलाशी, इन्ट
(नजरबन्दी), डिपोर्टेशन (देशनिकाला) और गोलियों
बौछाड । इसी से बगाल में रहना तब बेखटके न था । वि
दल में तब यह फैसला हुआ कि दल के अच्छे अच्छे
कर्ताओं को आसाम के किसी स्थान में रिजर्व फोर्स (सुर
सेना) के रूप मे रक्खा जाय । फलत नलिनी वाक्चि, न
घोष, नरेन बैनर्जी और अन्य अनेक लोगों ने गौहाटी (आस
में आ कर आश्रय लिया । सोते समय उन के बिछौनों के
भरी रिवाल्वरें रहतीं और उन्हीं में से एक एक आदमी
दो घटे के लिए पहरेदार के रूप में खिडकी के नज
सावधानी से बैठा रहता। कलकत्ते की पुलिस में किसी

फ्तार विप्लववादी के पास से गोहाटी का सवाद पा कर ९ जनवरी सन् १९१७ को यह मकान घेर लिया । पहरेदार ने पुलिस को आते देख सब को जगा दिया, पर चुपचाप ही। रिवाल्वर और पिस्तौल हाथ मे ले कर सभी बाहर आ कर पुलिस पर गोलिया दागने लग गये । इस एकाएक आक्रमण से पुलिस छिन्न भिन्न हो गई, और इसी बीच विप्लवी भी पहाड की ओर खिसक गए, किन्तु तीसरे पहर अनगिनत सशस्त्र पुलिस ने आ कर सारी पहाडी का घेरा डाल दिया। दोनो ओर से गोली चली, बहुत से घायल हो कर पकडे गये। इन में से केवल दो जने पुलिस की आख बचा कर भाग सके। इन दो मे से एक यही नलिनी थे । छ दिन रास्ता चल कर पहाड पार हो कर नलिनी लामडिंग् स्टेशन पर आ पहुचे। वह यात्रा क्या सीधी बात थी ! बगैर खाये और सोये प्रतिदिन चढाई उतराई पर गोडे तोडने पडे थे। सदा पुलिस की नजर से अपने को बचाते हुए, कभी वृक्ष पर चढ कर कभी पहाड की चोटी पर किसी चट्टान पर सो कर रात कटती थी। बराबर तेज चाल से पहाड की चढाई उतराई में चलते चलते हाथ पैर की तलियो मे दराडे पड गई। फिर क्या केवल चलने का ही कष्ट था ? पहाड की एक किस्म की चिपचिपी चिचडी नलिनी के माथे और पीठ में चिपट गई, अनेक तरह से खींचने छुटाने से भी वह नही छुटी । इस चिचडी का विष चढ जाने की पीड़ा से जर्जरित हो कर नलिनी एक दम

बेहाल हो गये । जो हो मौत के साथ लडाई लड कर आसाम की पुलिस के हाथ से बच कर नलिनी बिहार आये। किन्तु वहा रहना निरापद न था यह देख वे फिर बगाल चले आये। हावडा स्टेशन पर उतर कर जिन के मिलने की आशा की थी उन में से किसी को न देख पाया। सग मे एक रिवाल्वर थी। कहा जाँय ? पखवाड़े से अधिक हो चुका था जब से न खाना न सोना न कोई और नियम रहा था, शरीर टूट चुका था, जहरीला कीड़ा तब भी माथे और देह में चिपटा हुआ था। हावडा मे ही नलिनी को तेज बुखार हो गया। लाचार कोई उपाय न देख कर वे किले के मैदान के एक पेड के नीचे सो गये। मुर्दे की तरह दिन रात वहीं पडे रहे। परले दिन दैवयोग मे उनके एक परिचित विप्लवी न नलिनी को देख लिया। नलिनी के सब अगो में उस समय चेचक के चिन्ह दिखाई दिये। कलकत्ते में विप्लवियों की अवस्था उस समय अत्यन्त शोचनीय थी, प्राय सभी विप्लवी पकडे जा चुके थे। टका पैसा तब किसी के हाथ में न था, दो चार जने जो बाकी थे वे भी तन क्षीण आशा के साथ इधर उधर घूमते फिरते थे। कलकत्ते की एक छोटी सी कोठरी में उन्हें रक्खा गया। चेचक से उन की आखें और मुह ढक गये थे, जिह्वा अचल हो गई थी। तीन दिन तक बात करना भी बन्द रहा। इस प्रकार पैसा पास न होने से चिकित्सा कराये बिना दिन काटते रहे। इस मकान में उस समय केवल एक और वि

वादी अपने आप को छिपाये हुए थे। मृत देह की यथोचित क्रिया करने को भी लोग कैसे जुटेंगे सो समझ में न पडता था। सन् १९१८ मे विप्लवियों की अवस्था ऐसी ही शोचनीय हो गई थी। किन्तु नलिनी इस चेचक से भी मरे नहीं। मृत्यु और भी महनीय रूप मे दिखाई देने के लिए उस समय तक ढाका में प्रतीक्षा कर रही थी। चगे हो कर नलिनी बुझते विप्लव दीप का भार ले कर फिर ढाका में आ रहे। नलिनी और तारिणी मजूमदार एक ही मकान मे रहते थे। १५ जून सन् १९१८ को भोर के समय पुलिस ने फिर नलिनी का मकान घेर लिया। फिर दोनो ओर से गोली चली। तारिणी के अगो मे बहुत गोलिया लगने से वे वहीं मर कर गिर पडे। नलिनी ने गोली खा कर भी भागने की चेष्टा की, परन्तु फिर बन्दूक की गोली से घायल हो कर उन का देह भी जमीन पर लोटने लगा।

विप्लववादी नलिनी घायल अवस्था मे अस्पताल में लेटाए हुए है—पुलिस नाम धाम लेने में व्यग्र है,—डाइग डिक्लेरेशन, मरते समय का इजहार, मागती है।

मृत्युशय्या पर लेटे हुए घायल विप्लववादी असह्य यन्त्रणा सहते हुए मृत्यु की प्रतीक्षा मे हैं। ऐसे समय साधारण व्यक्ति अपने को छिपा नही सकता, वरन् इच्छा होती है कि उस के कार्यो को देशवासी भली भाति जान जाँय। जिन के लिए वह मरता है वे जान जाँय कि किस प्रकार वह दूसरो के लिए प्राण दे गया, साधारण मनुष्य की यही इच्छा होती

है। किन्तु विप्लववादियों की अपने को छिपाने की शैली साधारण नहीं होती। शिक्षा और साधना के बिना आत्म-गोपन का वैसा सामर्थ्य आता ही नहीं। मृत्यु के समय भी इच्छा नहा है, कोई उन्हें जान जाय, या कोई उन का "मूल्य" समझ ले—कोई मैसेज (सन्देश) नहीं है *—"Unwept, unhonoured, unsung" ही वह जाना चाहता है! वह नहीं चाहता कोई उस पर आँसू बहाय, कोई उस का नाम याद करे, कोई भी उस का गीत गाय!—इसी लिए मृत्यु शय्या पर पड़े विप्लववादी के क्षीण कण्ठ से उत्तर निकला, "Don't disturb please, let me die peacefully, तग न करो भाई, मुझे शान्ति से मरने दो।"

पुलिस ने अनेक प्रकार से बात निकालने की चेष्टा की—कहा नाम तो बताओ—घर कहा है? किन्तु उस का वह एक ही उत्तर था "Don't disturb please, let me die peacefully, कृपा कर और तग न करो भाई, शान्ति से मरने दो।"

इस प्रकार जो मृत्यु को महिमामय बना सकते थे, इस प्रकार जिन्हों ने आत्मगोपन करना सीखा था, उन की कहानी पर देशवासियों ने क्या कभी गौर कर के देखा है? वे लोग जीवन को सब आशा-प्रतीक्षा अपूर्ण रख कर ससार से एक-

*इस प्रसङ्ग में असहयोग के दिनों की याद आ जाती है, जब प्रत्येक छोटे बड़े नेता चार दिन की हवालात होने पर भी कालमों लम्बे "मैसेज" अखबारों में भेजना अपना पहला कर्त्तव्य समझते थे।

हम निश्चिन्त हो गए हैं। प्रतिष्ठा की रत्ती भर कामना
उन्हो ने नहीं रक्खी। मृत्यु के दरवाजे पर पहुच कर, ज
कोई बात खुल जाने का डर नहीं, वहा भी ख्याति का निषे
कर के शान्ति से मरते हैं। वे अपने कर्म्म मे यदि कि
को तृप्त करना चाहते हैं तो अपने ही अन्तरात्मा को, इसी लि
किसी और से कुछ भी अपेक्षा न रख कर शान्ति से मरना चाह
हैं। ससार की किसी चीज की भी चाह नहीं है, केवल देने के
वे मालिक हैं।

इन सब विप्लवियों को न जाने क्या कह कर बुला
चाहिए? शायद ये पागल थे, या शायद ये भ्रान्त निर्बोध बाल
थे, क्योंकि हमारे इस अभागे देश के अभिज्ञ नेता औ
राजनीति-विशारद विचक्षण पण्डित इन्हें इन्हीं शब्दों से पुकार
रहे हैं।

इन विप्लवियों का सब से बडा दोष, जान पडता है, यही थ
कि ये अपने उद्देश्य-साधन में कृतकार्य्य नहीं हो सके। मास के
बाद मास और बरस के बाद बरस विप्लव के लिए अनथक परि
श्रम करने के बाद भी ये केवल एक बडी व्यर्थता का ही उपार्जन
कर सके। जिस पथ का अन्तिम परिणाम केवल व्यर्थता हो वह
पथ क्या भ्रान्त नहीं है? इस व्यर्थता का कुछ भी मूल्य है?
भारत के अभिज्ञ नेता और विचक्षण समालोचक विप्लवियों से
ऐसे ही प्रश्न प्राय करते रहे हैं।

व्यर्थता के एक ही पहलू पर हमारा ध्यान जाता है, किन्तु

इस व्यर्थता की आड में जगत् की श्रेष्ठ सम्पद् किस
अपने को छिपाये रहती है, विफलताओं के द्वारा किस
शक्ति का सञ्चार होते होते एक दिन इस व्यर्थता व
सार्थकता आ कर दर्शन देती है, विफलता और परा
निराशा-वेदना पूर्ण अवसाद के समय में इन सब बातों व
में से बहुत से हृदयङ्गम नहीं कर पाते। सभी समाजों में
समयों में विप्लवी लोगों पर समाज के विज्ञ और अभि
हँसते और लाञ्छन लगाते रहे हैं, इस का कारण यही
प्राय सभी देशों के सभी विप्लवियों की पहली चेष्टायें
हुई हैं, और समाज के विज्ञ और अभिज्ञ लोग इसी
के माप से ही सब विषयों पर विचार करते रहे हैं।
नियम से भारत के विप्लववादी भी विज्ञ और अभिज्ञ
के मत में भ्रान्त पथ के यात्री हैं। और इन समालोचकों
जो बड़े ही प्रवीण और होशियार हैं वे इन विप्लवियों
"ईडियट" (बुद्धू, पागल) कहने में भी संकोच नहीं
भारत की लब्धप्रतिष्ठ मासिक पत्रिका माडर्न रिव्यू के
क्षण सम्पादक ने विप्लवियों को निर्देश कर के कहा
यदि भारत में कुछ भी लोग सशस्त्र विप्लववादी हैं तो
वासियों को निश्चय से अपनी बुद्धि-विवेचना पर
करना होगा।

विप्लवियों और समालोचकों में भेद यही है
विप्लवी लोगों की अपने आदर्श पर अटूट श्रद्धा है, इसी

उन्हों ने अद्भुत निष्ठा के साथ अपने आदर्श की ओर ज
पथ पर चलते हुए जीवन बिताया है, और इन सम
लोगों ने आरामचौकी पर बैठ कर समालोचना करने
जीवन का पेशा बना डाला है, बहुतों का तो यह सम
करना ही जीविका अर्जन करने का मुख्य अवलम्ब हो ग
जीविका कमाने के लिए अनेक बातों का हिसाब करके
होता है, किन्तु इस प्रकार हिसाब कर के चलने से
सत्य की मर्यादा को अटूट रखना शायद सम्भव नहीं
इन सब के अलावा विप्लवियों में और इन सारे समाल
में एक और भी बडा भेद है, विप्लवियो के नजदीक जो
"Faith" (श्रद्धा) है, समालोचकों के लिए वह केवल
nion" (सम्मति) है यह "सम्मति" प्राय सफलता का
पार नहीं कर सकती, इसी लिए फलाफल पर निर्भर
ही बहुधा "सम्मति" बनती है। किन्तु जो लोग इतिहास
के आसन पर बैठते हैं वे इस "सम्मति" की परवाह नहीं
वे निष्ठावान् और श्रद्धा सम्पन्न व्यक्ति होते हैं। विफलता
श्रद्धाभ्रष्ट नहीं कर पाती इसी कारण इतिहास में वे चिर
णीय हो जाते हैं, इसी से ये श्रद्धासम्पन्न व्यक्ति ही जग
कुछ स्थायी काम कर जाने मे समर्थ होते हैं।

भारत के विप्लववादी भी ऐसे ही श्रद्धासम्पन्न व्यक्ति
भारत के इन विप्लवियों की ओर निर्देश कर के ही प्र

सब विप्लवी अपने अभीष्ट-साधन में कृतकार्य नहीं हो पाते इसी कारण आज वे सरकार के अपराधी हैं, किन्तु यदि ये अपने उद्देश्य को सफल कर सकते तो फिर यही ससार में स्वदेश भक्त वीर साधक कह कर पूजे जाते।"

भारतीय विप्लवियो ने जो मार्ग पकड़ा था उस मार्ग से ही भारत की मुक्ति होगी कि नहीं कौन कह सकता है? शायद वे उलटे ही रास्ते पडे हों, किन्तु उन के साथ हमारा मत नहीं मिलता इसी कारण तो उन्हे "ईडियट (बुद्धू)" कहना उचित नहीं है। न जाने ससार के सभ्य लोगों मे भारतवासियों के मान इज्जत की इन विप्लवियों के द्वारा अधिक रक्षा हुई है अथवा इन के विरोधी समालोचकों की युक्तियों के ज़ोर पर! तो भी यह बात तो हम जानते हैं कि गत ६० बरसों तक जब रूसी विप्लववादियों के सभी प्रयास निष्फल हुए थे, जब प्रबल प्रतापी आस्ट्रिया की राजशक्ति के विरुद्ध इटली के मुट्ठी भर विप्लववादियों ने पहले पहल सिर उठाया था, तब इन देशों के विप्लववादियों को भी ऐसे ही व्यग्य और गालिया सहनी पड़ती थीं। ६० बरस के अनथक परिश्रम के बाद, अनेक बाधाओं और व्यर्थताओं मे से गुजर कर, सारे जगत् की उपेक्षा और प्रतिकूलता को सह कर आज रूसी विप्लववादियों की आशा सफल होने जा रही है। प्राय ४० बरस की कशमकश के बाद, कितने त्याग, कितने निर्यातन और कितनी अशान्तियों को लाघ कर इटली ने स्वा-

धीनता पाई थी। किन्तु जो इस मुक्ति पथ के प्रथम यात्री थे उन्हें उन की पहली विप्लवचेष्टाओं के व्यर्थ होने के दिन कितनी निन्दायें सहन न करनी पडी थीं। इस प्रसंग में आइरिश वीर की चिरस्मरणीय बात याद आती है—Any man who tells you that an act of armed resistance—even if offered by ten men only—even if offered by men armed with stones—any man who tells you that such an act of resistance is premature, imprudent, or dangerous, any and every such man should be at once spurned and spat at For, remark you this and recollect that somewhere and somehow and by somebody a beginning must be made and that the first act of resistance is always and must be ever premature, imprudent and dangerous" अर्थात्, "कोई आदमी जो तुम्हे यह कहे कि एक सशस्त्र मुकाबला—चाहे दस आदमी ही ऐसा मुकाबला करे—चाहे उन आदमियों के पास पत्थरों के सिवाय और कोई हथियार न हों—कोई आदमी-जो तुम्हें कहे कि ऐसा मुकाबला अपरिपक्ष है, अक्लमन्दी का काम नहीं है या खतरनाक है, प्रत्येक ऐसा आदमी लात खाने लायक और मुह पर थूका जाने लायक है। क्योंकि यह बात समझ लो और याद रक्खो कि कहीं न कहीं, किसी न किसी तरह और किसी न किसी को मुकाबले का आरम्भ

करना होगा, और मुकाबले का पहला काम हमेशा अपरिपक्व और खतरनाक होता है और होना ही चाहिए।"

मैंने अपनी शक्ति-अनुसार इन विप्लवियों का एक संक्षिप्त क्रमबद्ध इतिहास लिखने की चेष्टा की है। किन्तु इतिहास का प्राण होता है—जजमेंट—निर्णय। इस जजमेंट (निर्णय) के बिना इतिहास खाली घटना-पत्रिका (chronicle of events) रह जाता है। इसी से मैं बस-बन्धक घटनायें छोड कर और अनेक बातों को भी ले आया हू। और विप्लवियों की मैंने प्रशसा की है इस से कोई यह न समझे कि मैं विप्लववाद का प्रचार करता हू। मैं कहना चाहता हू कि उन के साथ हमारा मत भेद रहने पर भी उन के चरित्र बल को हम अस्वीकार नहीं कर सकते। किन्हीं के साथ मतभेद रहने से ही उन से घृणा करना या उन से गाली-गलौज करना तो अभीष्ट नहीं है, और इन विप्लवियों के विरोधी अंग्रेज राज्याधिकारियों ने भी इन के चरित्र की भरपूर प्रशसा की है, इस से वे (अंग्रेज) भी सचमुच विप्लववादी नहीं हो गये।

इतिहास लिखने बैठा हू इसी से भारतीय विप्लवियों को भारतवासी किस दृष्टि से देखते थे, क्यो उस दृष्टि से देखते थे, और उन्हें किस दृष्टि से देखना उचित है, इन सब विषयों की भी आलोचना कर गया हू। विप्लवियों ने सचमुच पागलपन किया था कि नहीं सो नहीं जानता हू, तो भी उनके पागलपन की बात सुन रवि बाबू की एक कविता के कुछ पद

याद आते हैं—

"कोन आलोते प्राणेर प्रदीप
ज्वालिये तूमि धराय आस*
साधक ओगो प्रेमिक ओगो
पागल ओगो धराय आस !"

"हे साधक, हे प्रेमिक, हे पागल, तुम इस भूमि पर आते हो—किस ज्योति से प्राणों के प्रदीप को बाल कर तुम इस भूमि पर आते हो !"†

---

*उच्चारण—आसो

† इस अध्याय के कुछ अंश नलिनी बाबू के "विप्लववाद," आत्म शक्ति में प्रकाशित गोपेन्द्रलाल राय के एक लेख और 'शंख" में प्रकाशित नलिनी धकृचि की कहानी से लिये गये हैं।—लेखक।

सातवां परिच्छेद

विप्लव का प्रयास व्यर्थ क्यों हुआ ?

भारतीय विप्लवियों के सभी प्रयास क्यों व्यर्थ हुए, यह जानने के लिए पहले यह समझना होगा कि वे चाहते क्या थे। उनका उद्देश्य भली भाति समझे बिना यह जानना भी कठिन होगा कि वे कहा तक विफल हुए या कहा तक नहीं, और उनकी इस विफलता का कारण क्या था। इसी लिए उन की इस व्यर्थता का कारण खोजने से पहले उनका उद्देश्य क्या था इस विषय की कुछ आलोचना करना आवश्यक है।

भारतीय विप्लववादियों का उद्देश्य क्या था, इस विषय पर कहने को इतनी बातें हैं कि यहा पर उन की पूरी आलोचना सम्भव नहीं है, कारण कि यह आलोचना करने के लिए भारत के राष्ट्र क्षेत्र में इस विप्लव के आविर्भाव से आरम्भ कर उनकी क्रमिक परिणति के इतिहास की भी आलोचना करना आवश्यक हो जाता है, और इस प्रकार यह आलोचना इतनी बडी हो जायगी कि हम आलोच्य विषय से बहुत दूर जा पडेंगे। इसी लिए इन सब आलोचनाओं को किसी और समय करने की इच्छा है। इस समय केवल अपना विषय

समझने के लिए जितनी आलोचना आवश्यक प्रतीत होती है उतनी ही करूंगा।

भारतीय विप्लवदल के बीच चाहे कितने ही मतभेद क्यों न रहे हो, इस विषय में वे सभी सम्पूर्णत एकमत थे। कि भारत को अक्षुण्ण स्वाधीनता प्राप्त करनी ही होगी, अर्थात् भारत भिन्न कोई भी जाति भारत के भले-बुरे की विचारकर्ता हो कर भारत के मंगल के लिए भारत के किसी भी काम में हस्ताक्षेप न कर सके—भारत के लिए किस प्रकार की शासन-प्रणाली सब से अधिक मगलकारी होगी इस विषय के विचारकर्त्ता और परिचालक भारतवासी ही हो, भारत का सामाजिक आदर्श क्या होगा, भारत में सामाजिक समस्या का समाधान किस प्रकार करना सब से अधिक मगलजनक होगा भारत-भिन्न जातियों के साथ भारत किस प्रकार का सम्बन्ध-सूत्र स्थापन करेगा, भारत के व्यवसाय वाणिज्य को किस प्रकार परिचालन करने से भारत का और जगत् का मगल होगा, इन सब बातों को भारतवासी ही जैसा ठीक समझें वैसा ही हो, और किसी भी जाति का उस में कोई हाथ न रहे-यही थी भारतीय विप्लवियों की दुराकाक्षा। भारत की यह स्वाधीनता ब्रिटिश साम्राज्य के बीच रह कर किसी तरह भी अक्षुण्ण नहीं रह सकती, बालक जिस प्रकार नि सशय रूप से अपने माता पिता को पहचानता है, भारत के विप्लवी भी यह बात उसी प्रकार नि सशय रूप से जानते थे। इसी से

भारतीय विप्लवियों की सब चेष्टाओं की जड में यह बात थी कि भारत को इस प्रकार शक्ति सामर्थ्य-सम्पन्न कर दिया जाय जिस से वह भारत-भिन्न सभी जातियों के हाथ से सब प्रकार से छुटकारा पा सके। इस भारत-भिन्न जातियों के समूह में अंग्रेज अपवाद नहीं है, वरन् साक्षात् रूप से इन अंग्रेजों के साथ ही पहला संघर्ष आरम्भ होता है कारण कि अंग्रेजो का ही साक्षात् रूप से भारत की सब अभिलाषा आकांक्षाओं और भारत के सब उद्यमों के साथ घनिष्ट रूप से संसर्ग है। और वे लोग यह भी समझते थे कि भारत को इस प्रकार स्वाधीन करने का सब से मुख्य उपाय है, भारत की क्षात्र शक्ति को जागृत कर देना—इस क्षात्र शक्ति के आदर्श को ही केन्द्र बनाकर हमारे विप्लवियों ने अपनी सब कर्म-प्रचेष्टा को नियन्त्रित किया था। महात्मा गांधी के भारत के राष्ट्र क्षेत्र में आविर्भाव होने से बहुत पहले से ही हमारे विप्लवियों को इस क्षात्र आदर्श और ब्राह्मण्य आदर्श के विषय में बहुत आलोचनायें और द्वन्द्व करने पड़े हैं। उन सब दार्शनिक आदर्शों का विचार और विश्लेषण करने की जगह यहां नहीं है, समय और सुयोग मिलने पर किसी और जगह वह करने की इच्छा है। तो भी संक्षेप से यहां इस सम्बन्ध में केवल दो चार बातें कह रखना बुरा न होगा। यथार्थ बात तो यह है कि ब्राह्मण्य आदर्श और क्षात्र आदर्श में सच सच कहें तो कोई भेद नहीं है, क्योंकि ब्राह्मण्य आदर्श की अन्तिम परिणति जहां होती

है, क्षात्र आदर्श की भी अन्तिम परिणति ठीक वहीं होती है। अर्थात् क्षत्रियधर्मावलम्बी पुरुष जब प्रकृत ज्ञान का अवलम्बन कर के जीवन को नियन्त्रित करते हैं तब उसका जो फल होता है, ब्राह्मणभावापन्न पुरुष भी वैसे ही प्रकृत ज्ञान का अवलम्ब ले कर जीवन बितायें, तो उस का भी वही एक ही फल होता है। अर्थात् यह जगत ब्रह्म का ही प्रकाश है, और वह ब्रह्म ही कभी सगुण और कभी निर्गुण रूप में अपना प्रकाश करते हैं, यह विश्व-ब्रह्माण्ड जो नित्य नये नये रूपों में परिवर्तित होता है वह भी उसी ब्रह्म का ही सगुण प्रकाश है, और जो अनिर्वचनीय है, जो मुह से प्रकट नहीं किया जाता, जहा जाकर मन बुद्धि धक्का खा कर प्रवेश करने में असमर्थ हो कर वापिस लौट आते हैं, जिसे किसी भी विशेष से विशेषित नहीं किया जा सकता, अर्थात् जो ब्रह्म का ही निर्गुण स्वरूप है —उस निर्गुण और सगुण ब्रह्म में यथार्थ में कोई भेद नही है, इस ज्ञान की उपलब्धि करना ही ब्राह्मण्य और क्षात्र आदर्श का अन्तिम लक्ष्य रहा है। वेदान्त के इस आदर्श का अनुसरण करें तो ब्राह्मण्य और क्षात्र धर्म में सचमुच कोई भेद नहीं रहता,— किन्तु वेदान्त के इस धर्म्म को सब लोग स्वीकार नहीं करते; भारत के सब सम्प्रदाय यह बात नहीं मानते कि ब्रह्म का सगुण स्वरूप सम्भव है—वे कहते हैं गुणातीत ब्रह्म का रूपभेद सम्भव नहीं है, ब्रह्म ही एकमात्र नित्य वस्तु है, और सभी अनित्य हैं, ब्रह्म के सिवाय और किसी वस्तु का यथार्थ रूप में

कोई अस्तित्व नहीं है—अगतत उन का होना प्रतीत होता है, पर वह भ्रम मात्र है, यही भ्रम माया है। यह माया कहा से आई और इस माया का स्वरूप क्या है इस सम्बन्ध में वे कहते हैं कि वह कहा नहीं जाता, वह अनिर्वचनीय है,—इसी से वे ससार को भी अनित्य कहते हैं, और इसी से उन के जीवन का श्रेष्ठ आदर्श रहा है इस संसार को त्याग कर ससार के रास्ते से दूर जा कर निर्जन मे, वन में, पर्वत में, गुफा मे रह कर, अर्थात् सन्यास ले कर तपस्या करना, भगवान् की आराधना करना । ब्राह्मणा द्वारा परिचालित हिन्दू समाज का यही सनातन और सर्व श्रेष्ठ आदर्श रहा है, यह बहुतों की धारणा है, इस आदर्श को ही जो मानव समाज के सम्मुख श्रेष्ठ आसन पर प्रतिष्ठित करना चाहते हैं, वही ब्राह्मण्य धर्म के पक्षपाती हैं, इसी आदर्श का मैंने ब्राह्मण्य धर्म कह कर उल्लेख किया है।—और क्षात्र धर्म कहने से मेरा प्रयोजन उस आदर्श से है जिस आदर्श में इस नित्य नूतन परिवर्तनशील जीवजगत् को मिथ्या माया कह कर उडा नहीं दिया जाता, जिस आदर्श मे इस जीवजगत् को इस ससार को निर्गुण ब्रह्म से अभिन्न समझा जाता है जिस आदर्श की प्राप्ति के लिए इस ससार की अवहेलना न कर के त्याग न कर के, इस ससार के भले-बुरे को, इष्ट अनिष्ट को, हिंसा अहिंसा को, राग द्वेश को समतुल्य समझ कर इस भीषण संग्रामस्थल में रह कर ही, ब्रह्म ही जीवजगत् हुए हैं और इस जीव जगत् में जो कुछ भला या बुरा है वह सभी ब्रह्म का ही

स्वरूप है, इस सत्य को उपलब्धि करने के लिए सासारिक कर्म में लिप्त रह कर ही अर्थात् सासारिक कर्म के साथ ज्ञान-योग को युक्त करके, कर्मयोग के पथ मे जो साधन करना होता है, उसे ही मैं क्षात्र धर्म कह कर पुकारता हू, और इन दोनों आदर्शों में सचमुच तीव्र द्वन्द्व रहा है। एक का आदर्श है शङ्कर और दूसरे का आदर्श ऋपि जनक, एक का आदर्श है वुद्ध और दूसरे का अदर्श वही कुरक्षेत्र के श्री कृष्ण, एक का आदर्श है श्रीचैतन्य और दूसरे का आदर्श गुरु गोविन्द। एक के आदर्श को अनुसरण करने पर इस ससार को अनित्य, माया-ज्ञान कह कर इस की अवज्ञा और अवहेलना करनी होती है, और दूसरे के आदर्श की प्राप्ति करने के लिए इस ससार को नित्य नये नये रूपो मे सजा कर पूजना होता है युग युग में सृष्टि की उद्दाम प्रेरणा से इस ससार को तोड फोड कर, चूर चूर कर फिर नये सिरे से गढ कर खडा करना होता है। कभी ज्ञान के आलोक में जगत् को उद्भासित करके, कभी खड्ग की धार से रक्त का स्रोत वहा कर पृथिवी को रग कर कभी प्रेम के प्रवाह मे धरित्री सुन्दरी को स्नान कराके, ससार के सौन्दर्य को अद्भुत कारीगरी के साथ विचित्र आभाओ में अनेक रगों में रगीन स्निग्ध और उज्ज्वल करके विस्मयकर बना डालना होता है।

यह सब आदर्शों का द्वन्द्व केवल वाक्चातुरी अथवा भाषा का द्वन्द्व ही न था, इस दल मे जिन्हो ने जिस आदर्श को श्रेष्ठ

समझा उन्हों ने उसी आदर्श के पीछे सारा जीवन व्यतीत किया, इस प्रकार कितनों ने ही घर बार छोड़ कर सन्यास का आश्रय लिया और अनेकों ने तिल तिल कर के पूर्ण रूप से अपने परिवार वालों और राज्याधिकारियों के अनेक निर्यातन भोगते हुए, जीवन के भोग-विलास को तुच्छ समझ कर विपत्ति के बीच ही जीवन बिता दिया। जो भी हो, विप्लवियों ने वर्त्तमान काल में क्षात्र आदर्श को ही श्रेष्ठ आसन दिया था। इसी से इस क्षात्र आदर्श को ही वे भारत के जन साधारण में प्रचार करने का प्रयास करते रहे।

इस भारत से विप्लवी लोग भारत के गरीब से गरीब जन-साधारण तक को ही समझते थे, किन्तु किस प्रकार य गरीब से गरीब जनसाधारण तक अपनी अभिलाषायें व्यक्त करेंगे, और किस प्रकार सचमुच ही इन जन साधारण की अभिलाषायें अक्षुण्ण रह सकेंगी, देश के समाज मे धनी और निर्धनों के बीच, जिमींदारों और उन की रैयत के बीच, धनी व्यवसायपतियों और कुली मजदूरों के बीच देशी और विदेशी व्यवसायपतियों के बीच परस्पर जो अनेक स्वार्थों के द्वन्द्व उपस्थित हो गये हैं, और इन विरुद्ध स्वार्थों के सघर्ष के कारण जगत् में जो अनेक प्रकार की अशान्ति, अनेक प्रकार के वैषम्य, अनेक अत्याचार-निर्यातनों और अनेक भीषण रक्त पातों की सृष्टि हो रही है, इन सब द्वन्द्वों को कैसे सुलझाना होगा, और यथार्थ विप्लवी होने पर राष्ट्र के समान समाज को भी चूर चूर कर नए सिरे से गढ़ना

होगा, ये सब बातें भारत के विप्लवी लोग भली भांति हृदयङ्गम नहीं कर पाये, और इन सब समस्याओं की ओर ध्यान देते हुए भारत के भावी राष्ट्र को सच ही किसी विशेष रूप में गढना होगा, यह बात भी उन्होंने गम्भीर चिन्ता के साथ नहीं सोची थी। वे सोचते थे ये सब बातें स्वाधीनता पाने के बाद देखी जायेंगी। तो भी अधिकाश विप्लवियों का यही मत था कि भारत की राष्ट्र शासनपद्धति की नींव गणतन्त्र के आदर्श पर ही स्थापित होगी। इस व्यापार मे अधिकाश विप्लवी राजा के लिए कोई स्थान नहीं रखते थे, अधिकाश इस लिए कहता हू कि इनमे ऐसे भी कोई व्यक्ति थे जो सोचते थे कि यदि भारत के कोई स्वाधीन कहलाने वाले राजा भारत के इस स्वाधीनता-समर में प्राण और मन से योग दें तो उन्हे भारत का राज्यासन दिया जा सकता है, और उस दशा में भारत का राष्ट्र-सघटन इग्लैंड की पार्लिमेंट के अनुसार गठित होगा। महाराष्ट्र मे "अभिनव-भारत" नामक गुप्त समिति की ओर से, "Choose, oh Indian Princes," (अर्थात् भारत के राजाओ, अपना रास्ता चुन लो) शीर्षक की एक छोटी सी पुस्तिका का गुप्त रूप से प्रचार किया गया था, उसमे बड़ौदा के राजा गायकवाड का स्पष्ट रूप से ही उल्लेख करके उपर्युक्त भाव का प्रचार किया गया था। पजाब के सिक्खो में से भी अनेकों की इच्छा थी कि भारत में फिर खालसा राज स्थापित किया जाय। फिर विप्लवियों में से अधिकाश हिन्दू ही थे इस लिए उन के बीच

किसी किसी के दिल में यह इच्छा गुप्त रूप से थी कि भारत के स्वाधीन होने के माने हिन्दू राज्य की पुनःस्थापना के होंगे। किन्तु क्रमशः यह भाव बिलकुल लुप्त हो जाता है, और अन्त में यद्यपि वे मुख्यतः हिन्दुओं के स्वावलम्बन के ऊपर ही भरोसा कर के अपने कार्य में आगे बढ़ते थे, तो भी स्वाधीन भारत की कल्पना में भारत की किसी भी जाति को उन्होंने दूसरी जाति के अधीन कर रखने का संकल्प नहीं रक्खा, अर्थात् भारत की स्वाधीनता के लिए भले ही हिन्दू मुख्यतः परिश्रम करें तो भी स्वाधीन भारत में प्रत्येक जाति का समान अधिकार रहेगा अर्थात् प्रत्येक जाति का स्वार्थ अक्षुण्ण रहेगा, यही था भारतीय विप्लवियों का राजनैतिक आदर्श।

हमारे देश के प्रायः सभी लोग एक सुर से कहते रहे हैं। कि भारत का विप्लव प्रयास बिलकुल ही व्यर्थ हुआ है, और इस प्रकार इस का व्यर्थ होना ही अवश्यम्भावी था। वे कहते हैं वर्तमान युग मे नवीन वैज्ञानिक उन्नति के कारण किसी भी राजशक्ति के विरुद्ध कोई प्रजा सामरिक शक्ति की सहायता से विप्लव नहीं कर सकती। और वे सोचते हैं,अंग्रेजों के समान शत्रु को सामरिक शक्ति की सहायता से हरा कर स्वाधीनता पाने की कल्पना करना भी निरा पागलपन है, इसी से वे भारत के विप्लवियों को पागल और अविवेचक अथवा निर्बोध समझते थे और समझते हैं।—अवश्य ही, इन सब बातें यदि सत्य हैं तो भारत को चिरकाल

रहना है, कारण कि पूर्णस्वाधीनता पाने का और कोई रास्ता भी ये समालोचक लोग दिखा नहीं सके, और इस आधुनिक युग में भी रूस और जर्मनी के विप्लव दलों ने प्रवल राजशक्ति को हरा दिया है, यह बात न मानने का भी तो कोई चारा नहीं है, इसी से यह कहना, जान पडता है, युक्तिसंगत न होगा कि वर्त्तमान युग में कोई भी प्रजाशक्ति सुप्रतिष्ठित राजशक्ति को विप्लव के रास्ते से सामरिक शक्ति की सहायता से हरा नहीं सकेगी, और भारत के विप्लव दल के साथ रूसी और जर्मन विप्लव दल की तुलना करने से एक बात विशेष रूप से हमारे ध्यान में आती है कि जर्मन और रूसी विप्लवियों को अपने ही लोगों के विरुद्ध अस्त्र धारण करने पड़े थे, किसी विदेशी राजशक्ति के साथ लड़ाई हो तो सारे स्वदेशवासियों की सहानुभूति और सहायता पाने की यथेष्ट सम्भावना रहती है। इसी से विदेशी राजशक्ति के विरुद्ध विप्लव करना सिविल वार (गृह-युद्ध) करने की अपेक्षा अनेक अंशों में सहल है। तो भी यह बात तो सच है कि भारत का विप्लव-प्रयास व्यर्थ हुआ और रूसियों और जर्मनों का विप्लव-प्रयास सार्थक हुआ है। यह बात सच भले ही है, किन्तु इस व्यर्थता के कारण के विषय में ही तो अनेकों के साथ मेरा मतभेद है, और यहां मैं उन कारण का ही अनुसन्धान कर रहा हूं, भारतीयों को सचमुच विप्लव के पथ में जाना चाहिए कि नहीं इस की मैं कोई आलोचना नहीं कर रहा हूं, यहां पर तो केवल अपने विरुद्ध

पक्ष वालों की प्रधान युक्ति का ही विश्लेषण कर दिखाने की तनिक सी चेष्टा की है। एक बात पाठक मन में रक्खें कि मैं अतीत की ही बातों की आलोचना कर रहा हूं, और अतीत की आलोचना करना ही इतिहास लिखते समय ठीक है, इसी से भविष्य में क्या होगा अथवा क्या होना उचित है यह मेरा आलोच्य विषय नहीं है। अस्तु, जो भी हो, जो हम कह रहे थे उसे ही फिर पकड़े, कह रहे थे कि भारतीयों का विप्लव प्रयास व्यर्थ क्यों हुआ ?

अनेक लोग कहते हैं कि उपयुक्त समय नहीं आया था इसी कारण भारतीयों का विप्लव-प्रयास व्यर्थ हुआ, अर्थात् विप्लव-प्रयास को सार्थक करने के लिए जो परिस्थिति अपेक्षित है वह परिस्थिति भारत मे अब भी नहीं है, भारत के जन साधारण सचमुच विप्लव करना नहीं चाहते, इसी लिए विप्लव का प्रयास व्यर्थ हुआ। भारतवासी सचमुच स्वाधीनता नहीं चाहते, पराधीनता की ज्वाला को सच ही अनुभव नहीं करते, इसी से वे विप्लव पथ में अग्रसर नहीं होते, बहुतों के मत में विप्लवियों के व्यर्थ होने का यही सर्व-प्रधान कारण है।

किन्तु भारतवासी सच ही स्वाधीनता नहीं चाहते, पराधीनता की ज्वाला का अनुभव नहीं करते, यह तो मैं नहीं मानता, किन्तु उस स्वाधीनता को पाने के लिए जिस त्याग, जिस वीरता की आवश्यकता होती है भारतवासियों में उन सब गुणों का एक दम अभाव है, यह मानने का कोई

नहीं है। किन्तु जो लोग यह कहते हैं कि देश के अशि
जन साधारण (Mass) ने इस विप्लवान्दोलन में योग
दिया इसी कारण विप्लव का प्रयास व्यर्थ हुआ उन की बात
मुझे ठीक ठीक सच नहीं मालूम होती—कारण कि विप्ल
ने कभी किसी भी दिन प्रकट या गुप्त रूप से देश के किस
अथवा कुली-मजदूरों को इस विप्लवान्दोलन में भाग लेने
लिए पुकारा ही नहीं, देश के शिक्षित लोगों ने जब जिस रूप
जनसाधारण (Mass) को पुकारा है जनसाधारण ने अ
त्याग करके भी बहुधा उस पुकार का उत्तर दिया है। देश
शिक्षित लोग अपने कर्त्तव्य को समझ लेने के बाद भी जो न
कर सकते, देश के अशिक्षित जनसाधारण अनेक बार अप
सहज बुद्धि से ही वही अनायास कर डालते हैं। अवश्य
अशिक्षित जनता कर्तव्य की खातिर बहुत दिन तक त्य
अथवा कष्ट स्वीकार नहीं कर सकती, इसी से अशिक्षित जन
के ख्याल पर निर्भर कर के कोई भी बड़ा या स्थायी का
करना सम्भव नहीं।

और जो लोग यह कहते हैं कि देश के अधिकांश लो
अशिक्षित हैं इसी लिए अब भी विप्लव का प्रयास सार्थक न
होता, और जब तक देश के अधिकांश लोग शिक्षित नहीं होंगे
तब तक विप्लव का प्रयास व्यर्थ होगा ही, उन से मैं रूस
दृष्टान्त दिखा कर कह सकता हूँ कि विप्लव प्रयास

न जानने पर निर्भर नहीं करती।

तो फिर भारत का विप्लव-प्रयास व्यर्थ क्यों हुआ ? किन्तु सच ही क्या भारतीय विप्लवियों का इतना त्याग, इतना अद्भुत साहस सच एकदम व्यर्थ ही हुआ है ? उन्हों ने कितने ही निर्यातन सहे, कितनी विषम विपत्तियों के बीच ऐसी निष्ठा के साथ अनिचलित रहे, कितनी ही दुर्घटनाओं के तीव्र आघात, कितने ही विश्वासघातकों के निर्दय व्यवहार और कितनी ही पराजयों की मर्मपीड़ा सह कर ऐसी दुर्दमनीय दृढ़ता के साथ वे बार बार अपने सङ्कल्प की साधना में अग्रसर रहे, यह सब क्या सच ही एक दम व्यर्थ हो गया ? क्षात्र शक्ति के आदर्श ने क्या देश में कुछ भी प्रतिष्ठा नहीं पाई ? मरने का डर क्या भारतवासियों के मन से कुछ भी दूर नहीं हुआ ? देश के अन्यान्य प्रकाश्य आन्दोलनों पर विप्लव-आन्दोलन क्या किसी तरह का भी प्रभाव नहीं कर पाया ? वर्ल्ड पालिटिक्स (विश्व की राजनीति) पर, संसार के सभ्य देशों में क्या भारत का यह विप्लवान्दोलन कुछ भी छाया नहीं डाल सका ? अथवा इस विप्लवान्दोलन के कारण भारत का गौरव जगत की सभा में कुछ भी नहीं बढ़ा ? इस सम्बन्ध में हार्वर्ड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर श्रीयुत ऐशर लिखित पैन-जर्मनिजम, बर्न हार्डी कृत जर्मनी एन्ड दि नेक्स्ट वार इत्यादि ग्रन्थों की ओर ध्यान देने को पाठकों से अनुरोध करता हूँ—इस से वे मेरी बात का तात्पर्य बहुत कुछ हृदयङ्गम कर सकेंगे।

बहुत लोग कहते हैं कि विप्लवियो के कार्यों के कारण मंगल की अपेक्षा अमगल ही अधिक हुआ, अंग्रेज सरकार को इन विप्लवयों के कारण ही प्रजापीडन का अधिक सुयोग मिल गया है, इमी से नित्य नये नये कठोर में कठोर कानूनो के सहारे भारत के वैध खुले आन्दोलनों में भी अंग्रेज सरकार अनेक प्रकार से बाधायें डाल पाई है। पर सच सच बात कहे तो वैध प्रकाश्य आन्दोलन का दमन होने के बाद से ही विप्लव का कार्य कलाप प्रकाशित होने लगा है, और राउलट कमिटी की सिडीशन रिपोर्ट में अंग्रेजों ने कदाचित् अनजान में ही इस प्रकार सब विषयों की आलोचना की है जिस से स्पष्ट प्रतीत होता है कि विप्लवियो के प्रत्येक उद्यम के कारण ही बारी बारी अंग्रेजो ने भारत को राजनैतिक अधिकार दिये हैं।

यह बात भी अवश्य ही बहुत लोग स्वीकार करते हैं कि भारत को जो कुछ सामान्य राजनैतिक अधिकार मिले हैं वे मुख्यत भारत के इन दृढचित्त विप्लवियो के प्रयास से ही मिले हैं।

खैर जो भी हो, विप्लवियो ने जो चाहा था वह तो नहीं पाया, विप्लवी देश को स्वाधीन करना चाहते थे, सो वे कर नहीं सके, विप्लवियों की मुख्य चेष्टा व्यर्थ हुई।

मैं समझता हू, चिन्ताशील, प्रतिभावान् उपयुक्त नेता का अभाव ही इस व्यर्थता का सब से बडा कारण था। रूस वा

जर्मनी के विप्लवदल के बीच ऐसे बहुत व्यक्ति है या थे, जो ससार के श्रेष्ठ चिन्ताशील व्यक्तियो मे आसन पाने योग्य थे, किन्तु भारतीय विप्लवदल में ऐसे कोई भी चिन्ताशील व्यक्ति जिन्हे ठीक थिकर (विचारक) कहा जा सके, ऐसे कोई भी शक्तिमान व्यक्ति न थे, इसी से भारतीय विप्लवदल अपना प्रचार-कार्य, कहना चाहिए, कुछ भी नहीं कर पाया, और इसी लिए इस विप्लवदल का प्रभाव वैसा नहीं दिखाई दिया। यह भले ही सच है कि भारत के इस विप्लव-वाद के अन्दर विवेकानन्द का ज्वलन्त आदर्श वर्तमान था और भारतीय विप्लवियों में से अधिकाश इसी महापुरुष की प्रेरणा से अनुप्राणित थे, किन्तु विवेकानन्द के समान कोई भी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति साक्षात् रूप मे इस विप्लव दल में न थे। श्री अरविन्द घोष और लाला हरदयाल यदि अन्त तक इस दल मे रहते तो जान पडता है, विप्लवदल का यह दैन्य बहुत कुछ दूर हो जाता, किन्तु वे भी अन्त मे इस दल को छोड गये। इन्हीं अरविन्द के प्रसग मे मेरे एक परिचित व्यक्ति मुझ से एक प्रसिद्ध कविता के कुछ एक पद कहा करते थे, यहा उन्हें उद्धृत करने का लोभ नहीं रोक सकता हू —

He is gone to the mountain
And he is lost to the forest,
The spring is dried in the fountain,
When the need was the sorest

बहुत लोग कहते हैं कि विप्लवियो के कार्यों के कारण मगल की अपेक्षा अमगल ही अधिक हुआ, अंग्रेज सरकार को इन विप्लवयो के कारण ही प्रजापीडन का अधिक सुयोग मिल गया है, इसी से नित्य नये नये कठोर से कठोर कानूनो के सहारे भारत के वैध खुले आन्दोलनों में भी अंग्रेज सरकार अनेक प्रकार से वाधाये डाल पाई है। पर सच सच बात कहे तो वैध प्रकाश्य आन्दोलन का दमन होने के बाद से ही विप्लव का कार्य कलाप प्रकाशित होने लगा है, और राउलट कमिटी की सिडीशन रिपोर्ट में अंग्रेजों ने कदाचित् अनजान में ही इस प्रकार सब विषयों की आलोचना की है जिस से स्पष्ट प्रतीत होता है कि विप्लवियो के प्रत्येक उद्यम के कारण ही बारी बारी अंग्रेजों ने भारत को राजनैतिक अधिकार दिये हैं।

यह बात भी अवश्य ही बहुत लोग स्वीकार करते हैं कि भारत को जो कुछ सामान्य राजनैतिक अधिकार मिले हैं वे मुख्यत भारत के इन दृढचित्त विप्लवियों के प्रयास से ही मिले हैं।

खैर जो भी हो, विप्लवियो ने जो चाहा था वह तो नहीं पाया, विप्लवी देश को स्वाधीन करना चाहते थे, सो वे कर नहीं सके, विप्लवियो की मुख्य चेष्टा व्यर्थ हुई।

मैं समझता हू, चिन्ताशील, प्रतिभावान् उपयुक्त नेता का अभाव ही इस व्यर्थता का सब से बडा कारण था। रूस वा

जर्मनी के विप्लवदल के बीच ऐसे बहुत व्यक्ति हैं या थे, जो संसार के श्रेष्ठ चिन्ताशील व्यक्तियों में आसन पाने योग्य थे, किन्तु भारतीय विप्लवदल मे ऐसे कोई भी चिन्ताशील व्यक्ति जिन्हें ठीक थिंकर (विचारक) कहा जा सके, ऐसे कोई भी शक्तिमान व्यक्ति न थे, इसी से भारतीय विप्लवदल अपना प्रचार-कार्य, कहना चाहिए, कुछ भी नहीं कर पाया, और इसी लिए इस विप्लवदल का प्रभाव वैसा नहीं दिखाई दिया। यह भले ही सच है कि भारत के इस विप्लव वाद के अन्दर विवेकानन्द का ज्वलन्त आदर्श वर्तमान था और भारतीय विप्लवियों में से अधिकांश इसी महापुरुष की प्रेरणा से अनुप्राणित थे, किन्तु विवेकानन्द के समान कोई भी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति साक्षात् रूप से इस विप्लव दल में न थे। श्री अरविन्द घोष और लाला हरदयाल यदि अन्त तक इस दल मे रहते तो जान पड़ता है, विप्लवदल का यह दैन्य बहुत कुछ दूर हो जाता, किन्तु वे भी अन्त मे इस दल को छोड़ गये। इन्हीं अरविन्द के प्रसंग मे मेरे एक परिचित व्यक्ति मुझ से एक प्रसिद्ध कविता के कुछ एक पद कहा करते थे, यहा उन्हें उद्धृत करने का लोभ नहीं रोक सकता हू —

He is gone to the mountain
And he is lost to the forest,
The spring is dried in the fountain,
When the need was the sorest

इस प्रकार के चिन्ताशील प्रतिभावान् पुरुषों की वात छोड भी दें, तो इस विप्लवदल में किसी वडे साहित्यिक किसी वडे समाचारपत्रों के लेखक अथवा किसी वडे कवि ने भी योग नहीं दिया। एक तरह से कह सकते है, कि इस विप्लव दल मे इन्टलैक्चुअल्स (intellectuals) नहीं थे, और इस प्रकार के लोगो का विशेष अभाव था इसी कारण यह विप्लव दल प्रचार-कार्य की ओर प्राय उदासीन ही रहा। जो कुछ गुप्त पत्रिकाये आदि वीच वीच में प्रचारित होती थी, वे केवल सामरिक उत्तेजनापूर्ण प्रतिहिंसा के उच्छ्वास से भरी होती थीं, उन सव लेखों मे चिन्ताशीलता का कोई भी परिचय नहीं पाया जाता, जीवन का कोई नया आदर्श उन मे प्रकट नहीं होता। भारत के साहित्य में उन का कोई स्थान रहेगा कि नहीं इस में सन्देह है। भारतीय विप्लवी किसी स्थायी साहित्य को सृष्टि नहीं कर सके। इस प्रकार विप्लवदल का प्रयास व्यर्थ होना ही था।--तो भी विप्लवान्दोलन के उस प्रथम युग मे वारीन्द्र और उपेन्द्र द्वारा परिचालित युगान्तर पत्रिका ने इस तरफ वहुत काम किया था! इस युगान्तर पत्रिका का अद्भुत प्रभाव आज भी हम देखते है। इसी से वारीन्द्र एक दिन गर्व के साथ अन्दमान में कहते थे "जो पथ मैं एक वार दिखा आया हू, वगाल आज भी उसी एक पथ का अनुसरण किये चलता है, कोई भी नया पथ निकालने की और किसी ने क्षमता न दिखाई, छि!"

इस के सिवाय यह विप्लवदल प्रकाश रूप से अपना कोई भी कार्य-धारा नहीं चला सका। इस विप्लवदल में ऐसे कोई भी नेता न थे जो प्रकाश्य आन्दोलन में भाग ले कर तिलक अथवा गान्धी के समान मर्यादा के अधिकारी हो सकते। इसी से यह विप्लवान्दोलन जनसाधारण से क्रमश अलग हो कर एक सकीर्ण दायरे की सीमा में बन्द हो जाता है। इस प्रकार प्रकाश्य आन्दोलन के नेता न हो सकने पर देश की अशिक्षित जनता को अपने आदर्श की ओर नहीं लाया जा सकता यह बात भी विप्लवदल के नेता लोग शायद भली भाति नहीं समझ सके, या शायद उन के बीच ऐसे उपयुक्त आदमियों का अभाव था; इसी कारण वे बाध्य हो कर इस विषय में उदासीन रहे। विप्लवदल में उपयुक्त नेता का अभाव होने से ही भारत के दूसरे राजनैतिक दलों के नेता अनेक बार इस विप्लव दल को अनेक प्रकार से एक्स्प्लौयट करते (ठगते) रहे हैं। जो हो उस से देश की कोई विशेष क्षति तो भले ही नहीं हुई, किन्तु विप्लवदल की हीनता उस से विशेष रूप से प्रकट होती है।

इस के अलावा और जिन सब कार्यों से यह विप्लव का प्रयास व्यर्थ हुआ उन का "बन्दी जीवन" मे अनेक जगह प्रसङ्गानुसार उल्लेख कर आये हैं, यहा उन सब बातों को दोहराने की आवश्यकता नहीं।

किन्तु इस विप्लवान्दोलन के विफल होने के बाद भारत

के अनेक विप्लवियों ने अच्छे कृतित्व का परिचय दिया है जिन सब गुम नाम युवकों को यहा कोई पूछता भी न था, यहा तक कि विप्लवदल मे भी जो नेतृत्व नहीं पा सके, देश के लोग जिन्हे अर्धशिक्षित या साधारण रूप से शिक्षित कहते थे, विदेश के कार्यक्षेत्र मे उन्हीं युवकों की अनेक प्रकार से अपनी शक्ति का परिचय देने की कहानिया सुनी जाती हैं। सभ्य जगन् मे आज उन का स्थान हमारे देश के विख्यात नेताओं की अपेक्षा अधिक भले ही हो, कम नही है। लाजपत के समान नेताओं की अपेक्षा भी इस विप्लवदल के नेताओ ने विदेश मे अधिक सम्मान पाया है, यह वात भी सुनने में आई है। ऐसा होने का कारण है, इन युवकों ने ससार के श्रेष्ठ नेताओं के सम्पर्श मे आने पर अथवा विदेश की स्वाधीन आवहवा के ससपर्श मे आने पर देखा है कि उनका वही पुराना गुप्त सकीर्ण पथ ही एक-मात्र पथ नहीं है, और उन्हो ने जब नये मार्गों में कदम रक्खा, तव वह अन्दर की प्रसुप्त शक्ति अवसर और सुयोग पा कर पूर्ण रूप से विकास पा उठी।

इन सब विदेश प्रवासी विप्लवियो के जीवन से यह भी जाना जाता है कि विप्लवदल में सच ही ऐसे अनेक गुमनाम युवक थे जिन के विषय में हमारे देशवासी शायद अब भी कुछ विशेष नहीं जानते,—और जो अवकाश और सुयोग पाने पर शायद एक दिन ससार के श्रेष्ठ विचारको के साथ एक आसन पर बैठने लायक हो सकते हैं। पुस्तक पढने या परीक्षायें पास

करने से ही तो विचारशील नहीं हुआ जाता, पुस्तक पढ़ना एक बात है और विचारक (Thinker) होना दूसरी बात। जगत् के एक श्रेष्ट विचारक मनीषी हर्बर्ट स्पेन्सर तो मातृभाषा और फ्रासीसी भाषा के सिवाय और कोई भी भाषा न जानते थे, और ऐसे अनेक पण्डित हैं जो बहुत भाषाओं के सचमुच पण्डित हैं किन्तु वे तो हर्बर्ट स्पेन्सर के समान नहीं हैं। हमारे देश में अनेक लोग थे जो विवेकानन्द की अपेक्षा अधिक पण्डित थे, किन्तु विवेकानन्द के समान विचारक और कितने हुए हैं ? जगत् के अनेक विचारशील कवियों और दार्शनिकों की जीवन-कथा देखने से यह बात समझी जा सकती है कि पाण्डित्य और विचारशीलता एक जिन्स नहीं है।

"पेड़ जैसे नहीं जानता कि कब उस के फूल फूट निकलेंगे, पक्षी जैसे नहीं जानता कि ठीक कब उसे गाना गाने की चाह होगी, प्राणों की समूची शक्ति में से उन का उद्यम जागता है, इस लिए उन्हें जैसे सोच विचार कर इरादा नहीं बनाना पड़ता" उसी प्रकार जो विचारशील हैं—भावुक हैं, जो सच-मुच ही प्रतिभावान् थिंकर्स (विचारक) हैं वे पण्डित हुए बिना भी, पोथी पढ़ने या परीक्षायें पास करने में वैसी योग्यता दिखाये बिना भी, संसार के अनेक अद्भुत विस्मयजनक रहस्यों की घोषणा कर सकते हैं।

विप्लवियों के कार्यकलाप को बहुत लोग पागलपन कहते हैं, वे कहते हैं, दिमाग में कुछ खराबी हुए बिना कोई विप्लवदल

में योग नहीं दे सकता।—विप्लवियों के अन्दर सुनते हैं सुबुद्धि का—अक्लमन्दी का—विशेष अभाव है, किन्तु रवि बाबू ने कहा है,—"सुबुद्धि नाम की जिनिस मर्त्य लोक में पाई जाती है, किन्तु ऊंचे दर्जे का जो खालिस पागलपन है वह देव लोक की वस्तु है। इसी से जान पडता है सुबुद्धि की गढी हुई चीजें टूट फूट पडती हैं। और पागलपन जिन चीजों को उड़ कर लाता है वे बीज की तरह जंगलों के जगल उगा डालती हैं।"

———

हिन्दी भवन, लाहौर

का

संक्षिप्त सूचीपत्र

दम्पती परामर्श

दाम्पत्य विज्ञान (Sexual Science) सम्बन्धी पुस्तकों की ससार प्रसिद्ध लेखिका श्रीमती डा मरी स्टोप्स की प्रसिद्ध पुस्तक (Radiant Motherhood) का सरल हिन्दी अनुवाद। नवविवाहित स्त्री पुरुषों के लिए अनूठा उपहार। इस में 'प्रेमी की मधुर कल्पना' 'भावी माता की उलझनें और शारीरिक कष्ट' 'गर्भ और समागम' 'यन्त्रणा का द्वार' 'प्रसव और सौन्दर्य' इत्यादि २० महत्वपूर्ण विषयों का वैज्ञानिक विवेचन किया गया है। मूल पुस्तक के ४ ही वर्षों मे १४ सस्करण हो चुके हैं। मूल्य १।=), सजिल्द १॥=) नमूने की दो सम्मति देखिये।

नवविवाहितों के लिए यह पुस्तक विशेष उपयोगी है। पुस्तक में २० अध्याय हैं जिन में प्रेम की कल्पना से लेकर गर्भ स्थिति, सौन्दर्यरक्षा और प्रसव की तिथि गणना के तरीके तक सभी उपयोगी विषय आ गए हैं। इसे प्रत्येक नवविवाहित युवक युवती को पढ़ना चाहिए।

"प्रताप" कानपुर अप्रैल १९२९

"उन सैकड़ों स्त्रियों के लिए जो माता बनने वाली हैं, पर दाम्पत्य विज्ञान जिनके लिए एक गुप्त रहस्य है, तथा उन सैकड़ों नवयुवकों के लिए जो गृहस्थाश्रम में पग रखने वाले हैं, यह पुस्तक बड़ी उपयोगी है।"

प्रताप-प्रतिज्ञा

राष्ट्रीय भावों से ओत-प्रोत मौलिक नाटक। लेखक श्रीयुत रवीन्द्र नाथ ठाकुर की प्रसिद्ध "विश्वभारती" के हिन्दी अध्यापक श्रीयुत जगन्नाथ प्रसाद 'मिलिन्द' मूल्य ॥।) मात्र। नमूने का एक गाना देखिये—

आज भिखारी आया द्वार।
माग रहा है हाथ पसार॥

ऐ मा बहनो, बहू बेटियो,
लाज रखो माता की आज
दे दो अपने' झोलो के धन"
दे दो अपने "सिर के ताज"

सुनो देश की करुण पुकार।
आज भिखारी आया द्वार॥

प्यारे लाल, लाडले भाई
भर्ता, पिता लुटा दो आज
ओ"जोहर"मतवाली बहनो,
जन्म भूमि की रख लो लाज

खोलो खोलो हृदय उदार।
आज भिखारी आया द्वार॥

वन वन पागल से फिरते ह
आज पुजारी मा के लाल
आहुतिया भेजो प्राणो की
फिर उन्नत हो मा का भाल

बलिवेदी पथ रही निहार।
आज भिखारी आया द्वार॥

वन्दी जीवन

(ले० श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल)

सन् १९१५ में समस्त उत्तर भारत में की गई गदर की तैयारियों का पूरा वर्णन है। मनोरञ्जकता में उपन्यास को और वीरता तथा त्याग की बातों में मराठा और सिक्ख इतिहास को भी मात करता है। रासबिहारी के वे कारनामें जिन्हें सुनते सुनते जज अपने नोट लिखना भूल जाते थे और कर्त्तारसिंह, पिंगले नलिनी, प्रताप आदि के शत्रु को भी मुग्ध करने वाले चरित्र पढ़ना चाहें तो शीघ्र ही एक प्रति खरीदिये। कर्त्तारसिंह, पिंगले, अमीरचन्द, अवध बिहारी आदि शहीदों के डेढ़ दर्जन दुर्लभ चित्र भी अमेरिका जापान आदि से मंगवा कर छापे गये हैं। प्रथम भाग ।।।) द्वितीय भाग १।=)

स्वयं-स्वास्थ्य रक्षक (Physical Culture)

लेखक श्रीयुत प्रेममोहनलाल वर्मा, एम ए बी एस सी एच. एम बी एफ आर ई एस । स्वास्थ्य विषयक अनूठी पुस्तक। प्रत्येक नवयुवक तथा नवयुवती के लिये अत्युपयोगी है। इस में "स्वास्थ्य की चन्द परीक्षाएँ" "खाना" "पानी" "वायु और प्राणायाम" "ब्रह्मचर्य" "बालक का पालन पोषन और घरेलू नुस्खे" इत्यादि सर्व-साधारणोपयोगी विषयों की विशद विवेचना की गई है। २०० पृष्ठ की पुस्तक का दाम ।।।=) मात्र

फूलों की डाली

बालोपयोगी अनूठी कहानिया। रग बिरगी छपाई। बच्चे एक बार हाथ मे लेकर पूरी पढे बिना नही छोडेंगे। मू० ।=)मात्र देखिये बच्चे क्या कहते है—

"नहीं चाहते गेंद न लड्डू नहीं दूध की यह प्याली,
हमे मगा दो रग बिरङ्गी मा तुम "फूलों की डाली"।
नये और सुन्दर चित्रों से सुमनोहर शोभावाली,
तीनो बैठ पढेंगे इसको नित हम भैया औ लाली।

चुने हुए फूल

श्रीयुत प्रेमचन्द इत्यादि हिन्दी के प्रसिद्ध लेखकों की चुनी हुई सरल बालोपयोगी कहानियों का सग्रह। बढिया छपाई, फर्स्ट क्लास गेट-अप, आठ हाफटोन चित्र। मूल्य केवल ॥)

ऊपर की दोनो पुस्तकों की उपयोगिता इसी से जानी जा सकती है कि ये दोनों कितने ही स्कूलों में सहायक पुस्तक (Supplimentray Reader) के रूप मे पढाई जाती हैं।

सत्यहरिश्चन्द्र सटिप्पण

भारतेन्दु कृत सत्य हरिश्चन्द्र नाटक का विद्यार्थी-उपयोगी सुसम्पादित सस्करण। मूल्य ।=), नमूने की एक सम्मति —

यह इस पुस्तक का दूसरा सस्करण है। पुस्तक हिन्दी-साहित्य सम्मेलन

नाटक के पद्यों का अर्थ समझना परीक्षार्थियों के लिए कठिन जान पड़ता है हमने इस नाटक का ऐसा अन्य उपयोगी सटिप्पण संस्करण नहीं देखा। पुस्तक की ८ पृष्ठों की भूमिका में कवि, ग्रन्थ और पात्रों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। अन्त में दो पृष्ठों में नाटक सम्बन्धी परिभाषाएं, १७ पृष्ठों में 'टिप्पणी' (शब्दार्थ और भावार्थ) तथा ३ पृष्ठों में संक्षेप में 'नाटक की कहानी' दी गई है। मूल ग्रन्थ भाग में भी नीचे पाद-टिप्पणियां दी हुई हैं 'टिप्पणी' में अलकारों और छन्दों का भी निर्देश कर दिया गया है। छपाई की शुद्धता, सफाई, सम्पादन और 'गेट अप' सभी सन्तोष जनक हैं। "प्रताप" कानपुर।

जीवित-हिन्दी

यह आज कल के हिन्दी के प्रमुख लेखकों और प्रतिभाशाली कवियों की अनूठी रचनाओं का संग्रह है। हिन्दी के आधुनिक स्टाइल से परिचित होने के लिए इस से अच्छा दूसरा संग्रह नहीं मिल सकता। पुस्तक पंजाब युनिवर्सिटी की हिन्दी रत्न परीक्षा और एफ० ए० (लड़कियों के लिए) में कोर्स है। मूल्य सजिल्द १।)

सूक्ति-सुधा

यह कबीर, रहीम, तुलसी, बिहारी आदि महा कवियों की चुभने वाली अनूठी सूक्तियों का संग्रह है। इस की छपाई और चटकीली जिल्द ही आप के मन को मोह लेगी। पुस्तक पंजाब युनिवर्सिटी की हिन्दीरत्न और बी० ए० परीक्षा में पाठ्य पुस्तक स्वीकृत हो गई है। मूल्य सजिल्द १)

छप रही है

फुलवारी—मनोरंजक कहानियां। सरल भाषा।
तिरंगी छपाई, अनूठे चित्र ।)

पंजाब गौरव—पंजाब के बीस महा पुरुषों और वीरों
अनूठी कहानियां। चार तिरंगे और दस हाफटोन बढ़िया
क़ीमत ॥=)

इन के अतिरिक्त हिन्दी की समस्त उत्तमोत्तम उपन्यास ना
काव्य तथा स्त्रियोपयोगी पुस्तकें और सस्ता-साहित्य-मण
अजमेर की सस्ती पुस्तकें मिलने का एक मात्र पता —

हिन्दी भवन
(हास्पिटल रोड) अनारकली लाहौर